रचयिता—

कीर्तन-कला-निधि, काव्य-कला-भूषण—
पं० राधेश्याम कथावाचक बरेली।

प्रति ३०००

❀ ॐ ❀

बम्बई की "न्यू अल्फ्रेड नाटक मण्डली"

के

स्टेज का

सर्वश्रेष्ठ तथा सर्वप्रधान

नाटक

लेखक—

कीर्तन-कला-निधि, काव्य-कला-भूषण—

पं० राधेश्याम कविरत्न बरेली

प्रकाशक—

मानकशाह कोला भाई बलसारा

मैनेजिंग प्रोप्राइटर—

न्यू अल्फ्रेड थियेट्रिकल कम्पनी आफ़ बम्बई

प्रति २००० सन् १९३५ ई० मूल्य १)

सूचना

पात्र-परिचय
पुरुष पात्र

भगवान् विष्णु
भगवान शङ्कर } प्रसिद्ध देवता।
भगवान् ब्रह्मा

सुदर्शन—देवरूप में भगवान् का चक्र।

गरुड़
भूदेव } देव तथा मनुष्य रूप में भगवान् का वाहन।

अम्बरीष—नाभाग राजा का ज्येष्ठ पुत्र।

मणिकान्त—नाभाग राजा का कनिष्ठ पुत्र।

नाभाग—अयोध्या नरेश।

घण्टाकरण—एक महाजन।

टैनी—घण्टाकरण का नौकर।

दुर्वासा—प्रसिद्ध तपस्वी।

रुद्रदत्त—दुर्वासा का शिष्य।

इन्द्र
कामदेव } प्रसिद्ध देवता।

कल्लूमल—
डल्लूमल—
लल्लूमल—
मल्लूमल— } प्रजावासी।

कोठारी—राजा का एक सचिव ।

वरुण वायु अग्नि	प्रसिद्ध देवता ।

धर्म्म—मनुष्य रूप मे धर्म्म ।

सत्य—मनुष्यरूप मे सत्य ।

इनके अतरिक्त-नगरवासी, मन्त्री, दर्बारी, यमदूत, भगवान्--विष्णु के पार्षद, भक्तदल, अकाल-पीडित आदि ।

स्त्री-पात्र

लक्ष्मी---भगवान् विष्णु की पत्नी।

पद्मा---अम्बरीष की पत्नी ।

उमा—मणिकान्त की पत्नी ।

सुकेशी---मणिकान्त की माता ।

लीला—घण्टाकरण की पत्नी ।

भक्ति—स्त्री रूप मे भक्ति ।

इनके अतिरिक्त-उमा की सखियां, महिला सभा की महिलाये, अकाल पीडित स्त्रियाँ आदि ।

स्थान—

वैकुण्ठलोक, ब्रह्मलोक, कैलास, अयोध्या, तपोवन आदि ।

ईश्वर-भक्ति

—❀❀❀—

मंगला चरण

—o—

नट आदि----

जय जय गणपति, गणेश, ऋद्धि-सिद्धि, दाता ।
बलदायक वरदायक, सुखदायक, जयदायक-
गणनायक जन के त्राता ॥ जय जय गणपति० ॥
एक रदन, गजबदन, दया के सदन, सदाभयहारी ।
मंगलकारी, विघ्नविदारी, दयावतारी, भण्डारी ॥
जो चरणोंमें शीश नवाता, वह जनमनवाञ्छितपाता ॥

नट—

जिस नटवर की भृकुटि में, नाच रहा संसार।
नट समाज की लाज का, वह ही राखनहार॥

नटी—(आकर) आर्य्यपुत्र, देख रहे हो-सामने क्या है?

नट—क्या है प्रिये?

नटी—क्या है? गंगा यमुना जैसी पवित्र नदियों--और हिमालय, विन्ध्याचल जैसे सुन्दर पहाड़ों से सुरक्षित--प्यारा भारत देश।

नट—हाँ देख रहा हूं। यही वह देश है-जहां राम, परशुराम, कृष्ण और बुद्ध भगवान् ने अवतार लिया है। यही वह देश है-जहाँ पाणिनि, पराशर, वशिष्ठ, वाल्मीक, व्यास, याज्ञवल्क्य और भरद्वाज से महर्षि होगये है। यही वह देश है-जहाँ हनुमान से योद्धा, भीष्म से ब्रह्मचारी, भीम से गदाधारी अर्जुन से धनुर्धारी और अभिमन्यु से बालक अपना नाम अमर करगये है। यही वह देश है-जहाँ हरिश्चन्द्र से सत्यवादी भागीरथ से पराक्रमी कर्ण से दानी, नानक से गुरू, दयानन्द से वेद--प्रचारक और सूर-तुलसी से कवि अपनी कीर्ति जिन्दा छोड़ गये हैं। इस समय भी तो-विक्रम की बीसवी शताब्दी में भी तो-गान्धी जैसे महात्मा, मालवीय जैसे ब्राह्मण और नेहरू जैसे त्याग-मूर्ति यहां मौजूद हैं। तभी तो यहां के निवासी गर्व के साथ कहा करते हैं :—

खेती है अपनी जीविका, और इष्ट वह सर्वेश है।
सन्तान हम भारत की हैं, भारत हमारा देश है॥

नटी—अच्छा तो बतलाइये-सब कुछ होते हुए भी, हमारे देश में इस समय किस चीज़ की खास कमी है ?

नट—कमी ? इस समय ? कमी तो इस समय बहुत है। धन नहीं है, बल नहीं है, विद्या नहीं है, पुरुषार्थ नहीं है।

नटी—अजी इससे भी बड़ी चीज बताइये कि क्या नहीं है ?

नट—इससे भी बड़ी चीज ? एकता नहा है।

नटी—नहीं--नहीं आप भूले, ईश्वर की भक्ति नहीं है। आज-कल का मनुष्य समाज ईश्वर को भूलगया है। इसीलिये तो धन, बल, विद्या और पुरुषार्थ हीन होकर एकता को भी खो बैठा है। पश्चिमीय देशो मे तो किसी किसी जगह खुले शब्दों में कहा जा रहा है कि 'मजहब को हम छोड़ते हैं'—'मज़हब' से हमारा कोई सरोकार नहीं'। कहीं कहीं दूसरी आवाज़ है कि--'मैटर ही सब कुछ है, ईश्वर कुछ नहीं'--'मैटर ही मे यह सब कुछ होरहा है, आत्मा से कुछ वास्ता नहीं'-मुझे डर है-कि यह लहरें यह आवाजें हमारे पूर्वीय देश पर आकर कही अपना ज्यादा असर न डालें—

ये देव--शक्ति का भारत न हो अशक्त कहीं।
कि राम--भक्त न होवे हराम--भक्त कहीं॥

नट—बात तो ठीक है, आज कल भारतवासी--अपने नाशवान् शरीरों का बनाव शृंगार करना जानते हैं, तरह तरह की झूठी बातें बनाकर--रुपया पैदा करना जानते है, बड़ी बड़ी तर्कीबें लगाकर राजा और प्रजा मे मान बढ़ाना जानते हैं, सारे जगत् को अपने सामने रखकर--जगतव्यापी आन्दोलन उठाना जानते हैं, लेकिन जिसके जगत् में यह सब कुछ करते हैं, उस जगत् के पति ईश्वर को नहीं जानते हैं :—

जो जान रहा अन्तर की, उस अन्तर्यामी को भूल गये।
अंधेर, गजब है--घर वाले, घरके स्वामी को भूल गये॥

नटी—अब तो आप मान गये कि इस समय देश मे, ईश्वर भक्ति की खास कमी है ?

नट—हॉ--मान गया। पर देवी, ईश्वर इन देश वासियों को क्यो नहीं अच्छी बुद्धि देता ?

नटी—देशवासी ईश्वर को पुकारें तब न ? यह तो अपने ही घमण्ड मे चूर है। 'हम यह करते हैं'—'हम वह करते हैं--'हम यह कर सकते है'----'हम वह कर सकते हैं'। जब 'हम' 'हम' का इन मे इतना बढ़ा हुआ अभिमान है-तो ईश्वर को क्या गरज पड़ी है जो इनकी सहायता करे ?

नट----ठीक कह रही हो।

नटी—ठीक कह रही हूं तो आज-देश की यही कमी पूरी करने के लिये-ईश्वर भक्ति के नाम से-भक्तराज़ अम्बरीष का नाटक दिखाइये। इस ईसा की बीसवीं सदी के अँधेरे घरों में-भक्ति की किरण पहुंचाकर-सोते हुए मनुष्य समाज को जगाइये।

नट—अहा! वही अम्बरोष जो अयोध्या का राजा था? और जिसकी भक्ति से तपस्वी दुर्वासा का झगड़ा था? वह कथा मैं जानता हूं। द्वादशी का पारण करते समय, राजा पर ऋषि कोपायमान हुए, तब राजा की रक्षा को भगवान् विष्णु ने अपना सुदर्शन चक्र छोड़ा। वही न?

नट—वही।

नटी—अच्छा तो श्रीमद्भागवत-और भक्तमाल से यह कथा लेकर कार्य प्रारम्भ किया जाय। समय होगया, अब विलम्ब न किया जाय। मैं अम्वरीष बनत्ता हूं, तुम अम्बरीष की पत्नी पद्मा बन जाओ।

नटी—जो आज्ञा—

नट—

बहा दो वह भक्तो की धार। नहा कर पावन हो संसार।
छोड़कर झूठा वाद विवाद। बन सब अम्वरीष प्रह्लाद॥

हम क्या हैं, क्या संसार है, इस परम पद का जानलें ।
बैठे हैं जिनको भूल, उन भगवान् को पहचान लें ॥

गायन

भारतवालो, फिर भारत में लहराये ईश्वर--भक्ती ।
भारत के बच्चे बच्चे को, फिर भाये ईश्वर-भक्ती ॥
सतयुग से लेकर आज तलक तुम ईश्वर भक्त रहे हो ।
अब भी कलयुग में काम करो, रह जाये ईश्वर-भक्ती ॥
ईश्वर-भक्ती की सम्पति के हो. तुम्हीं बड़े अधिकारी ।
ये न हो-अभागा समझ तुम्हें, बिसराये ईश्वर--भक्ती ॥
रखना है 'राधेश्याम' तुम्हें, ईश्वर पर सदा भरोसा ।
वह दयाकरे तो--घर घर में, फिर छाये ईश्वर-भक्ती ॥
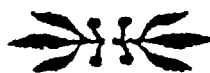
(सब का जाना)

स्थान—वैकुण्ठ

(सुदर्शन और गरुड़ देवता के रूप में खड़े हैं)

—❀—

गरुड़—सुदर्शन,

सुदर्शन—कहो गरुड़ ।

गरुड़—एक बात बताओ ।

सुदर्शन—पूछो ।

गरुड़—तप बड़ी चीज है या भक्ति ?

सुदर्शन—भक्ति ।

गरुड़—भक्ति ? नहीं, तप बड़ी चीज है ।

सुदर्शन—यह कैसे ?

गरुड़—यह ऐसे कि तपस्वी अपने तप के बल से, एक रोज मोक्ष जुरूर प्राप्त कर लेता है । मोक्ष प्राप्त करने के लिये तप ही तो सीधा रास्ता है ।

सुदर्शन—नहीं, तुम भूल रहे हो-तप का रास्ता खाण्डेको धारा है-जिसमें लाभ भी है और हानि भी ।

गरुड़—हानि क्यों है ?

सुदर्शन—हानि यों है कि-तपस्वी को अगर क्रोध नाम का राक्षस आकर दबाता है, तो तपस्वी अपने निश्चित स्थान से बहुत पीछे हट जाता है।

गरुड़—तो क्या भक्त को क्रोध नहीं दबाता ?

सुदर्शन—दबाता क्यों नहीं है-पर भक्त का वह कुछ बिगाड़ नहीं सकता।

गरुड़—क्यों ?

सुदर्शन—यों कि भक्त तो भगवान् के भरोसे रहता है। उसे जब-काम, क्रोध, लोभ, मोह अहङ्कार आदि राक्षस आकर सताते हैं, तो वह अपने भगवान् को पुकारता है। उसकी पुकार पर भगवान् तुरन्त वहां पहुंच जाते हैं और उसे संकट से बचाते हैं।

गरुड़—और तपस्वी को रक्षा को भगवान् नहीं पहुंचते ?

सुदर्शन—नहीं।

गरुड़—नहीं-किसलिये ?

सुदर्शन—इसलिये कि तपस्वो तो अपने तप के भरोसे मोक्ष प्राप्त करने के मार्ग पर जाता है—भगवान् के भरोसे नहीं।

गरुड़—तो भगवान् को भक्त ज्यादा प्यारा है-तपस्वी कम ?

सुदर्शन—इसका उत्तर मैं क्या दूं-स्वयं ही सोच लो। भक्त की रक्षा को भगवान् मुझे और तुम्हें दोनों को छोड़कर,

कितनी ही वार-खुद ही नंगे-पाओं दौड़े गये है क्या गज और ग्राह की कथा को भूल गये ? गज की जौ भर सूंड जब जल के ऊपर रह गई थी-और उसने भगवान् को पुकारा था-तब भगवान् ने उसी क्षण वहाँ पहुंच कर--और पाँव पकड़ कर उसे उबारा था। तुम्हें याद है ?--उसी दिन हमारी महामाता लक्ष्मी जीने भगवान् से पूछा था—"कि गज को पांव पकड़ कर क्यो उबारा ?" भगवान् ने कैसा अच्छा उत्तर दिया ?

गरुड़--क्या ?

सुदर्शन—यह कि-संकट मे पड़े हुए भक्त को, मेरा नाम लेकर मुझे पुकारना पड़ा, तब मै पहुंचा ? उसको पुकार के पहले हो क्यों न पहुंचा ? इसीलिये मैंने पहले उसका पांव पकड़ कर उस से क्षमा माँगी, फिर उसे उबारा।

गरुड़---कुछ भी हो, मेरे हृदय को पूरा सन्तोष नहीं होता।

सुदर्शन—पूरा सन्तोष तो भगवान् की कृपा ही से होगा।

गरुड़—अच्छा तो आज भगवान् ही से इसका निर्णय कराऊँगा।

(नेपथ्य में बाजे बजते सिंहासन पर लक्ष्मीनारायण प्रकट होते हैं, गरुड और सुदर्शन हाथ जोड़ते हैं)

सुदर्शन और गरुड़—जय, जय, भगवान वैकुण्ठनाथ की जय
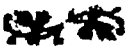
गाना

शान्ताकारं भुजगशयनं, पद्मनाभं सुरेशम् ।
विश्वाधारं, गगनसदृशं, मेघवर्णं शुभाङ्गम् ।।
लक्ष्मीकान्तं, कमलनयनं, योगिभिर्ध्यानगम्यम् ।
वन्दे विष्णुं, भवभयहरं, सर्वलोकैकनाथम् ।।

—*—

भगवान् विष्णु—गरुड़, मैं देख रहा हूँ कि आज तुम कुछ उदास हो ।

सुदर्शन—हां महाराज, आज यह कुछ उदास हैं । इनकी उदासी का कारण यह है कि मेरा और इनका एक बात पर अभी अभी मतभेद हो गया है । यह कहते हैं तप बड़ी चीज है और मैं कहता हूँ भक्ति ।

भगवान् विष्णु--(हँसकर) मैंने तुम दोनोंकी बातं सुनली हैं, जानली हैं और समझली हैं ।

गरुड़—तो महाराज निर्णय भी कर दीजिये । अपना मत देकर इस उलझन को सुलझा भी दीजिये ।

भगवान् विष्णु---मेरे मत से तो तुम दोनों ही का कहना ठीक है । मोक्ष का मार्ग तप भी है और भक्ति भी । परन्तु—

गरुड़--परन्तु क्या महाराज ?

भगवान् विष्णु---तप के मार्ग में बाधायें आसकती हैं, भक्ति के मार्ग में नहीं । तप के मार्ग पर चलनेवाला, चलते चलते

किसी जगह रुक भी सकता है, परन्तु भक्ति के मार्ग पर चलने वाला अन्त तक नहीं रुकता। तप के मार्ग से-भक्ति का मार्ग ज्यादा सरस, ज्यादा सरल और ज्यादा सीधा है। इस दृष्टि से मेरा कहना है कि सुदर्शन जो कह रहा है ठीक कह रहा है।

गरुड़—हैं! सुदर्शन ठीक कह रहा है ?

भगवान् विष्णु—मैंने कह दिया और तुमने मान लिया ऐसा नहीं है गरुड़ जो बात तुम्हारे कानों में पहुंचा रहा हूँ वह आखों से दिखाऊँगा। फिर सुदर्शन का कहना ठीक है यह तुम्हीं से कहलवाऊँगा। जाओ, कुछ समय के लिये तुम भूतल पर पहुंच जाओ सरयू नदी के किनारे, अयोध्यापुरी मे, नाभाग राजा का पुत्र भक्त अम्बरीष रहता है। उसकी भक्ति की शक्ति से-क्रोधी दुर्वासा के तप का बल-लड़ना चाहता है। उस लड़ाई का जो परिणाम होगा, वही तुम्हारी शङ्का का समाधान होगाः—

चोट बड़ी फूलों की होती, या होती पाषाणो की।
छड़ियो की है मार बड़ी, या मार बड़ी है बाणों की॥
धार बड़ी करुणा जल की है, या है बड़ी कृपाणों की।
आंखों से लो देख, जरूरत इस मे नही प्रमाणों की॥
रहे आजतक यहाँ, देवता और पक्षी की सूरत मे।
अब रह लो कुछ भूतल पर, भूतलवासी की सूरत में॥

गरुड़—जैसी मेरे प्रभु की इच्छा।

भगवान् विष्णु—और सुदर्शन !

सुदर्शन—महाराज।

भगवान् विष्णु—तुम्हें भी कुछ समय के लिये अब भूतल पर ही-स्थूल और सूक्ष्म दोनों रूपों मे-रहना होगा।

सुदर्शन—यह किस लिये ?

भगवान् विष्णु—इसका उत्तर समय पर दूंगा।

सुदर्शन—जैसी आज्ञा।

भगवान् विष्णु—(लक्ष्मी से) और-प्रिये,कमले,प्राणवल्लभे, प्राणाधिके, तुम्हे वैकुण्ठ ही मे छोड़कर-तुम्हारे इस वैकुण्ठविहारी को भी कुछ काल के लिये भूतल पर ही जाना पड़ेगा अम्बरीष की भक्ति अब अनन्य भक्ति होगयी है। इन दिनो उसके प्रेम की डोर जबर्दस्ती मुझे अपनी ओर खींच रही है। इसलिये उसकी टेक को मुझे रखना पड़ेगा-प्रत्यक्ष रूप में उसे दर्शन देना पड़ेगाः—

भक्त को है ध्यान मेरा, मुझको उसका ध्यान है।
भक्त को मै प्रान हूँ, तो भक्त मेरा प्रान है॥
भक्त मुझ मे लीन है, तो भक्त में मैं लीन हूँ।
भक्त है भगवान् का, तो भक्त का भगवान् है॥

सुदर्शन और गरुड़—जय जय, भक्तवत्सल भगवान् की जय।

(लक्ष्मीनारायण अन्तर्ध्यान होजाते हैं। गरुड़, पक्षी बनकर उड़ जाता है। और सुदर्शन, चक्र बनकर चला जाता है। सीन बदल कर, अम्बरीष का महल बन जाता है)

दूसरा सीन

स्थान अम्बरीष का महल

(भक्त मण्डली का गाते हुए, प्रवेश। मण्डली में कितनों ही के हाथों में, घंटे, घड़ियाल, शंख, ढोलक, झांझ, मँजीरा तथा खड़ताल आदि बाजे हैं। एक भक्त के सिर पर भगवान् का सिंहासन है। पहले गाना गाते २ भक्त मंडली आती है। सिंहासन वाला गाते गाते सिंहासन को चौकी पर रखता है और फिर मण्डली में शरीक होकर गाने लगता है। पीछे भक्ति में नाचता हुआ और गाता हुआ अम्बरीष आता है।

अम्बरीष और भक्तमण्डली—

गाना

मन मोरा अब घनश्याम सों लागा।
रंग बिरंगी गुड़ियों का रंग, ब्याह भये पर त्यागा।
जब प्रीतम-रँग रँगी चुनरिया, रहा न पचरँग धागा॥

हँसों की गति हँस ही जाने, जान सकै न कागा।
पारस छांडि गहै जो पथरी, सो नर महा अभागा॥

—o—

(गाने के बीच में, सुकेशी, नाभाग और भूदेव शास्त्री आजाते हैं और एक तरफ खड़े खड़े देखते हैं। गाने की समाप्ति पर अम्बरीष ठाकुरजी का प्रसाद भक्त-मण्डली को देता है। वह सब चले जाते हैं, तब अम्बरीष ठाकुरजी को प्रणाम करता है।)

अम्बरीष—जय, जय, श्रीलक्ष्मीनारायण भगवान् की जय।

सुकेशी—(नाभाग से) देख रहे हैं महाराज? इसे कुछ राज की चिन्ता है? हर घड़ी यही रंग चढ़ा रहता है।

अम्बरीष—(मूर्ति की ओर देखकर)

सरस, सलोने, सोहने, सुन्दर, साँवलशाह।
रखिये अपने दास पर, अपनी मेहर-निगाह॥

सुकेशी-(नाभाग से) हम लोग यहां खड़े हुए हैं-इसकी भी इसे खबर नहीं।

अम्बरीष-(मूर्ति से)

कमलावर, कमलारमण, कमलापति, कमलेश।
हरिये अपने दास का माया जनित कलेश॥

सुकेशी-(नाभाग से) इस से तो मेरा मणिकान्त लाख दर्जे अच्छा है।

नाभाग—(अम्बरीष से) अम्बरीष ! अम्बरीष !!

अम्बरीष—(पिता माता की ओर देखकर) आइये, आइये, पिताजी-जय लक्ष्मीनारायण। माताजी, जय लक्ष्मीनारायण। आइये-भगवान् का दर्शन कीजिये। आज मैं इन्हे सरयू में स्नान कराने लेगया था। देखिये, इस समय सिंहासन पर यह कैसे शोभायमान हैं ? इनकी कैसी मधुर मुसकान है ?—

किस आन, किस अदा से, चतुर्भुज हैं विराजे।
हाथों में शंख, चक्र, गदा, पद्म हैं साजे॥
यह चार भुजायें नही, है चार दिशायें।
चाहे तो ठीक राह भटकतों को दिखायें॥

नाभाग-बेटा, भगवान् के प्रति तुम्हारी इतनी प्रीति देख कर मैं प्रसन्न हूं। परन्तु-एक राजकुमार को आठो पहर इसी ध्यान मे लीन नही रहना चाहिए-राजकाज भी तो देखना चाहिये-राजसभा मे भा तो आना चाहिये।

अम्बरीष-पिताजी, तीनों लोको के राज के राजा की सेवा तो इस छोटे से राज से कही बढ़ चढ़ कर है। (मूर्त्ति को देखकर) इन नयनों की बलिहारी-

यह चाहें तो ब्रह्माण्ड को, पलकों में मसल दें।
राजा को रंक, रंक को राजा मे बदल दें॥
दुनियां मिटी है इनपै, यह दुनियां की जान हैं।
जीवन हैं चन्द्रमा के, तो सूरज के प्रान हैं॥

सुकेशो-(सामने देखकर) लो मेरा मणिकान्त भी आगया।

(मणिकान्त का आना)

अम्बरीष-हे हरि! हे हरि!!

मणिकान्त-(स्वगत) सावन के अन्धे को हरा ही हरा सूझता है। (अम्बरीष से) क्यो अम्बरीष, धुन लग रही है न?

अम्बरीष-(मणिकान्त से) आओ, आओ, मणिकान्त आओ, जय लक्ष्मानारायण। सिंहासन मे बैठे हुए भगवान् की झाँकी निहारो।

मणिकान्त-यह पाखण्ड-लीला तुम्हीं जैसे अन्धविश्वासियों के लिए अच्छी है, हमसे ज्ञानवान् राजकुमार के लिये नहीं। बड़े सवेरे मंगल आरती करो-दिन चढ़े शृंङ्गार आरती करो-दो पहर को भोग आरती करो-संझा को संझा आरती करो-फिर रात को शयन आरती करो-बस आरतियाँ ही करते करते मर जाओ-नतीजा कुछ नहीं:-

दो चार निठल्लों को पकड़ स्वाँग बनाया।
हरि-कीर्त्तन के नाम से तूफ़ान उठाया॥

दीपक जो जलाया तो कली दिल का खिल गई।
घण्टा ज़रा बजा दिया तो मोक्ष मिल गई॥

अम्बरीष—मणिकान्त, ऐसा अनर्थ मत करो, हरि और हरिकीर्त्तन करनेवालो की निन्दा मत करो।

मणिकान्त—हरि? कैसा हरि किसका हरि? कहां का हरि? हरि! हरि!! कोरी कल्पना का नाम तुमने हरि रख छोड़ा है:—

यह ढोंग, ढोंगियो का है खाने के वास्ते।
हरि नाम गढ़ा, खुद को पुजाने के वास्ते॥
उसका न है अस्तित्व, न कुछ उसका पता है।
क्यो दे रहे धोखा हो, ज़माने के वास्ते॥

अम्बरीष—तो तुम्हारी राय में ईश्वर कोई चीज नहीं?

मणिकान्त—हाँ, ईश्वर कोई चीज नहीं। जो कुछ है, वह प्रकृति है और प्रकृति के गुण हैं।

नाभाग—(स्वगत) है! मणिकान्त इतना नास्तिक!

सुकेशी—(स्वगत) कह तो ठीक रहा है।

भूदेव—(स्वगत) धन्य भगवान्, इसी जगह तो आपका अस्तित्व झलक रहा है। एक बाप के दो बेटे हैं। एक उतना बड़ा आस्तिक और दूसरा इतना बड़ा नास्तिक।

मणिकान्त—(अम्बरीष से)—

तत्त्वों के मेल ही से जगत का है सारा खेल ।
फिर दूसरे की कल्पना लाते हो किसलिये ?
देखा नहीं है, आंख से ईश्वर को आज तक।
फिर यह खयाली खार पकाते हो किसलिये ?

नाभाग--चुपहो मणिकान्त, तुम्हारा सिद्धान्त सही नहीं है। सही तो अम्बरीप ही का सिद्धान्त है।

सुकेशी--(मणिकान्त से) बेटा, इतना सच बोलना भी अच्छा नही जिससे किसी का जी दुखे।

मणिकान्त—नही, मेरा सिद्धान्त सही है।

अम्बरीष--भाई साहब, तुम्हारा सिद्धान्त यही है न कि सारी सृष्टि तत्त्वों ही का खेल है ?

मणिकान्त—हाँ मेरा सिद्धान्त यही है कि सारी सृष्टि तत्त्वो ही का खेल है। पानी और गोबर किसी जगह मिलाकर रख दीजिये और फिर देखिये कि तत्त्व क्या काम करते है। कुछ दिनो बाद उसमे बिच्छू पैदा होजायेगे।

अम्बरीष--बिच्छू ही तो पदा हो जायेंगे, सांप क्या नहीं पदा होते ?

मणिकान्त—सांपो के पदा होने का दूसरा नियम है।

अम्बरीष--तो तत्त्व कुछ नहीं रहे, जो कुछ रहे-नियम ही रहे।

मणिकान्त--नियम ही सही।

अम्बरीष—तो फिर नियमो का बनाने वाला भी कोई होना ही चाहिये।

मणिकान्त—(खामोश हो जाता है)

भूदेव--अहा हा हा, आस्तिक ने नास्तिक के आगे, ईश्वर को साबित कर दिया।

अम्बरीष—भाई साहब, यह सब झंझट के विचार आप ही के लिये हैं। मेरे लिये तो, प्रकृति, गुण, नियम, सब मेरे यह भगवान् ही हैं—

नर के क्या, पशु पक्षी तक के, यह ही तो भाग्य विधाता हैं।
जो इनका नाम नहीं लेता, उस तक के भोजन दाता हैं॥

मणिकान्त—अच्छा तो तुम अपने भाग्य विधाता भगवान् का चरणामृत पीकर मोक्ष प्राप्त करते रहो-हम तो अपनी भुजाओ के बल से दुनियां मे आनन्द करेगे।

अम्बरीप--और दुनियां के बाद ? परलोक पहुंचकर ?

मणिकान्त--अजी परलोक किसने देखा है कि क्या बला है। बस, यही लोक है और यही परलोक-कि खूब कमाओ, खूब खाओ--

अब तो आराम से गुजर जाये, कलको बरसात हो कि हो सूखा।
सामने की हटा के थाली को, वह है पागल कि जो रहे भूखा॥

(जाना)

नाभाग--(भूदेव से) शास्त्रीजी, मैं इस विचार मे पड़ा हुआ हूं कि-भविष्य मे राजगद्दी किसको दीजाय ? अम्बरीष को तो भगवान् की भक्ति के सिवाय-संसार की कोई चीज़ प्यारी नही है। रहगया मणिकान्त, सो अवस्था मे छोटा होने के कारण अधिकारी नहीं है।

सुकेशी--कैसे अधिकारी नहीं है ? जब बड़ा भाई-भगतई के कारण राज काज नही कर सकता तो छोटा ही अधिकारी हो सकता है। आखिर वह भी तो तुम्हारा ही बेटा है। तुम्हारी वह पहली रानी-जिसका-यह अम्बरीष है-जब मरी थी, तो मरते समय, कही उसे यह वचन तो नही दिया था कि-तेरे बेटे अम्बरीष ही को राज दूंगा ? सुकेशी और उसके पुत्र मणिकान्त के भाग को ठोकर से उड़ादूंगा ?

नाभाग--महारानी, इतनी उतावली न हो। तुम्हारा मणिकान्त चतुर तो है, परन्तु आस्तिक ज़रा भी नही, और स्थिर विचार का भी नही। (कुछ ठहरकर, अफसोस के साथ) मुझे तो दिखाई देता है कि-इन दोनो भाइयो मे से कोई भी मेरा नाम अमर नहीं रक्खेगा।

भूदेव----(स्वगत) महाराज नाभाग को क्या खबर कि अम्बरीष, इन्ही का नहीं, इनकी सात पीढ़ी तक का नाम अमर रक्खेगा। (नाभाग से) राजेन्द्र, मेरी तो राय यह है कि-इस

मामले को प्रजा की पसन्द पर छोड़ दियाजाय। प्रजा का मत जिसके पत्त मे ज्यादा जाय, वही गद्दी का मालिक बनाया जाय। और-शास्त्र भी यही कहता है--

"प्रजाभिर्निर्वाचितो राजा"

नाभाग--आपकी राय ठीक है शास्त्री जी। मै ऐसाही करूंगा। प्रजा पर हा यह चुनाव रक्खूंगा, इसमे किसी की नाराजी का भी डर नही।

अम्बरीष--पिताजी, आप मेरी चिन्ता छोड़कर-भैया मणिकान्त ही को राजगद्दी दे दीजिये। मेरा राज तो मेरे यह नारायण हैः--

मेरे त्रिभुवननाथ है, त्रिभुवन के आधार।
अरब खरब की सम्पदा, डारूँ इन पर वार॥

नाभाग--नहीं, नहीं, मै तुम्हारे इन्हीं त्रिभुवन नाथ के सामने-संकल्प करता हूं कि प्रजा का मत जिसके लिये ज्यादा होगा, वही मेरे इस विशाल राज्य का स्वामी होगा।

भूदेव--धन्य महाराज। शास्त्र भी यह कहता है--

"यो वै न्यायशील· सैव राजा"

(नाभाग और भूदेव का जाना)

सुकेशी--प्रजा क्या ऐसी गॅवार थोड़े हो है कि हीरे को छोड़कर शीशे के टुकड़े पर हाथ डाले।

(जाना)
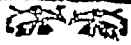
अम्बरीष—(मूर्ति से) त्रिलोकीनाथ, भक्तवत्सल भगवान् लक्ष्मीकान्त, मैं राजा बनने के बदले आपका सेवक बनना करोड़ गुनो अच्छा समझता हूं। मुझे अपनी शरण ही मे रखिये। अपनी नवधा भक्ति ही दीजिये। इस हृदय पर ऐसी छाप लगा दीजिये कि सदैव आपही का स्मरण किया करूं, आप ही का ध्यान किया करूं।

गायन

इस तनमें रमा करना, इस मनमें रमा करना।
वैकुण्ठ यही तो है, इसमें ही बसा करना॥
हम मोर बनके मोहन, नाचा करेंगे बन में।
तुम श्याम घटा बनकर, उस बनमें उठा करना॥
होकर के हम पपीहा, पी पी रटा करेंगे।
तुम स्वांति-बूंद बनकर, प्यासे पै दया करना॥
हम 'राधेश्याम' जग में, तुमको ही निहारेंगे।
तुम दिव्य ज्योति बनकर, नयनों में रहा करना॥

—*—

लोकम् क्या परलोकम् का भो, कलदारम् ही है आधारम् ।
भजकलदारम्, भजकलदारम्, भजकलदारम्, दिलदारम् ॥

(मणिकान्त का प्रवेश)

मणिकान्त---शेठ लक्ष्मीदास !

घण्टाकरण---आज्ञा ? राजकुमार !

मणिकान्त---यह आज कानो पर घण्टे कैसे लटकाये हैं ?

घण्टाकरण---राजकुमार, तीर्थयात्रा से वापिस आने के बाद कान पर घण्टे लटका कर मैं घण्टाकरण बन गया हूँ।

मणिकान्त---यह किसलिये ?

घण्टाकरण---यह इसलिये कि कानों में उसका नाम न जाय-जिसकी अन्धी भक्ति दुनियां में खून की नदियाँ बहाया करता है।

मणिकान्त---वह कौन ?

घण्टाकरण----जिसकी अन्धी भक्ति-लोगों से, आग, पानी, पेड़, पत्थर और चौराहों तक की पूजा कराया करती है।

मणिकान्त---मैं समझ गया-तुम्हारा मतलब ईश्वर से है।

घण्टाकरण----(सिर हिलाकर) है ! यही नाम कान में न आने देने के लिये तो मैंने यह दो पहरेदार मुक़र्रर किये हैं।

मणिकान्त----तो यह नाम इतना बुरा है ?

घण्टाकरण-अजी बुरा ? सैकड़ो में बुरा ! हजारो लाखो मे बुरा ! इसी नाम पर घर घर पाखण्ड का प्रचार हो रहा है। इसी नाम पर बड़े बड़े तीर्थों, मन्दिरों, मठा और सत्सङ्ग-भवनों मे दुराचार होरहा है। धूर्त साधु, इसी नाम पर धन कमाते हैं। रँगे, सियार इसी नाम पर बहू बेटियो को बहकाते हैं। जातियो के भेद भाव का बीज-यही नाम है। जत्थेदारियो या दलबन्दियो की मार काट का मल कारण-यही नाम है इसीलिये मैं ऐसा निखिद्द नाम अब कानो मे नही आने दूंगा। नही आने देने के लिये-मेरे यह दोनो घण्टे-दो मजबत किवाड़े हैं।

मणिकान्त—तो तुमने यह नाम लेना और सुनना कब से छोड़ा ?

घण्टाकरण-यह इन्हीं जाड़ो की बात है। माघ का महीना था, मावस का दिन था, कितने ही लोग त्रिवेणी के किनारे एक कथावाचकजी की कथा सुन रहे थे। कथावाचकजी के उपदेश से एक ने बैंगन खाना छोड़ा, दूसरे ने दही खाना छोड़ा, तीसरे ने नमक खाना छोड़ा, चौथे ने आटा खाना छोड़ा -

मणिकान्त-और तुमने ?

घण्टाकरण-मैंने ? मैंने उसी दिन से मन्दिर का जाना छोड़ा, गङ्गा का न्हाना छोड़ा, और जिसके नाम का उपदेश वे कथा वाचक जी दे रहे थे, उसका नाम सुनना छोड़ा।
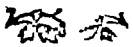
मणिकान्त–यह क्यों ?

घण्टाकरण–यह क्यो कि वे कथावाचक जी भी-कलदार ही के लिये कथा बांचा करते थे-और जिन चीजो के लिये दूसरो से छोड़ने को कहा करते थे उन्हे अपने आप बड़े चाव से सेवन किया करते थे। इसीलिये मैने समझ लिया कि कथा, कथावाचकजी और जिसके नाम का वे वर्णन किया करते थे, वह कुछ नही, कलदार ही बड़ी चीज़ है।

मणिकान्त-(स्वगत) बस ऐसा ही आदमी अपने काम का आदमी हो सकता है। (प्रकट) पर घण्टाकरण जी. कुछ लोगो की राय है कि–संसार का आधार कोई है जुरूर।

घण्टाकरण–हां, जुरूर।

मणिकान्त---उसी का नाम लोग बताते हैं "ईश्वर सर्वाधार"।

घण्टाकरण---हूं (सिर हिलाता है) उसका नाम है कलदार (थैली बजाता है) कलदार ही के हासिल करने का वह एक हीला है।

मणिकान्त---ठीक कह रहे हो। ईश्वर नाम का हीला, कलदार ही के हासिल करने के लिये है।

घण्टाकरण---हूँ--(सिर हिलाने के बाद, थैली को कान पर लेजाकर बजाता है) पवित्रम् कुरु, शुद्धम् कुरु।
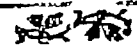
मणिकान्त--यह क्या ?

घण्टाकरण--आपने तीसरी बार उसका नाम लेकर मुझे अपवित्र किया। इसलिए मैंने कलदार की झनकार से अपने को पवित्र कर लिया।

मणिकान्त--ऐसा है-तब तो तुम आज से मेरे भाई हुए। (लिपट जाना) उसे देखो घण्टाकरण, क्या है ?

घण्टाकरण--क्या है ?

मणिकान्त--सूर्यवंश के विशाल राज्य का सिंहासन।

घण्टाकरण--आप उस पर बैठेंगे।

मणिकान्त--अगर प्रजा ने बिठाया।

घण्टाकरण--प्रजा की राय मैं लाऊँगा।

मणिकान्त—किस तरह ?

घण्टाकरण—अजी यह तो कलदारवालों के बांये हाथ का खेल है अगर कलदार के बल से राय ख़रीदनी शुरू कर देंगे, तो आंधी के आमों की तरह बटोरते बटोरते थक जायेंगे।

मणिकान्त—अच्छा तो वचन दो-(हाथ बढ़ाता है)

घण्टाकरण-(हाथ पर हाथ मार कर) दिया। अब से जो भी सूद पर रुपया कर्ज़ लेने के लिये आयगा-उससे यह शर्त की जायगी कि सूद-दर सूद की बजाय-राजकुमार मणिकान्तजी के लिये-राय।

मणिकान्त--और जिन्हें रुपया कर्ज़ दे चुके हो--उनके लिये क्या सोचा है ?

घण्टाकरण--उनसे ज़बर्दस्ती राय दिलवायेंगे। अगर वे कन्नी काटेंगे तो अपने रुपये की उन पर नालिश कर देंगे। उन की जायदादें नीलाम करादेंगे। उन्हे कारागार मे भिजवा देंगे।

मणिकान्त--ठीक है। इस तरह अपना पक्ष ज़रूर बलवान् होगा। परन्तु--अम्बरीष का पक्ष निर्बल करने का भी कोई उपाय सोचा है ?

घण्टाकरण--उसका उपाय ?-आप बड़े भाग्यशाली हैं राजकुमार। उसका उपाय तो-सामने देखिये-अपने आप आपके पास चला आरहा है।

मणिकान्त-(सामने देखकर) हाँ-देख रहा हूँ, तपस्वी दुर्वासा आरहे है।

घण्टाकरण--बस, इनसे हम यह कहे कि-"भक्ति के घमण्ड मे अम्बरीष तप की निन्दा करता है।" ऐसा करते ही यह क्रोधी मुनि क्रोध मे भर जायेंगे और अम्बरीष को शाप देने के लिये तैयार हो जायेंगे। इस युक्ति सेः--

डोर उस उड़ती पतंगिया की यहीं टूटेगी।
साँप मर जायगा, लाठी भी नहीं टूटेगी॥

मणिकान्त—धन्य घण्टाकरण-तुम बड़े चतुर हो। अगर मैं राजा होगया तो तुम्हे मन्त्री बनाऊँगा।

घण्टाकरण—भज कलदारम् (दुर्वासा का अपने शिष्य रुद्रदत्त के साथ आना)

मणिकान्त—पधारिये, पधारिये, अपनी अखण्ड तपस्या से त्रलोक्य को कँपाने वाले, अपनी की हुई प्रतिज्ञा को चौदह भुवन तक निभाने वाले, तपस्वियो के सम्राट, अद्वितीय योगिराज, पधारिये।

घण्टाकरण—(स्वगत) पहला तीर ठीक छूटा।

दुर्वासा—नाभाग नरेश की दूसरी सन्तान, आयुष्मान्। कहो प्रजा मे व्रत और तप नियमानुसार हो रहा है न?

मणिकान्त—सब हो रहा है महामुने,-परन्तु-

दुर्वासा—हाँ, हाँ, परन्तु क्या ?

मणिकान्त—जैसे नीम मे कड़वाहट है पुष्प मे काँटा है, चाँद मे काला धव्वा है, समुद्र मे खार है, उसी प्रकार इस राज में आजकल एक अनाचार है। क्यो घण्टाकरण जी ?

घण्टाकरण—हाँ महाराज।

दुर्वासा—वह अनाचार क्या है ?

मणिकान्त—आपसे क्या छुपा हुआ है कृपालु। कुछ पाखंडियों की संगति मे फँसकर-भाई अम्बरीष इतने घमण्डी

होगये है कि-भक्ति का पक्ष लेकर तप और तपस्वियों की घोर निन्दा करने लगे है। क्यो घण्टाकरण जी ?

घण्टाकरण—हाँ महाराज (स्वगत) दूसरा तीर भी ठीक छूटा।

दुर्वासा—हैं-वह कल का भगतुआ अभिमान की इतनी मदिरा पी गया ?

घण्टाकरण—महाराज, उसके उपदेश से, सारी प्रजा तप और प्राणायाम छोड़कर-कोरी खड़तालें बजाना ही सीख रही है।

मणिकान्त—मुझे तो यह चिन्ता है कि-भक्ति के जोश में किसी दिन वह-आप जैसे तपस्वीराज का अपमान न कर डाले, जिससे हमारे कुल को कलंक लग जाय। क्यो घण्टाकरणजी ?

घण्टाकरण—हां महाराज, (स्वगत) तीसरा तीर भी ठीक छूटा।

दुर्वासा—ऐसा है तो मैं अभी उसके पाखंड का भण्डाफोड़ कर दूंगा। उस मिट्टी के बर्तन के टुकड़े टुकड़े करके धर दूंगा। अन्धा, अज्ञानी, अभिमानी, भक्ति को तप से बड़ा समझता है ? दासोहँकी बाराखड़ी को--सोहं के महान् सिद्धान्त से आगे बढ़ाना चाहता है ? मै शाप दे दूंगा तो पलमात्र मे भस्म हो जायगा।

मणिकान्त-(स्वगत) इसी समय शाप देदो न !

दुर्वासा--उस तुच्छ को इतनी बिसात ? चीटे मे इतनी दौड़ ? भुनगे मे इतनी उड़ान ? मैं दुर्वासा हूं दुर्वासा। जिसकी तपस्या से सप्त द्वीप, नव-खण्ड, तीनो लोक और चौदहो-भुवन

थर्राते है। जिसके तेज से, अग्नि, बिजली और चांद सूरज तक चौंधा जाते हैं ----

धरनि को गेंद की नांईं, उड़ा सकता हूँ ठोकर से।
गगन मे दूसरी दुनियाँ, बना सकता हूँ तेवर से॥
दमकते है ये सब नक्षत्र ऊँचे हो तपोवल से।
बने है विष्णु, ब्रह्मा और शिव भी तौ तपोबल से॥

(जाना)

रुद्रदत्त---अरे हमारे गुरुदेव के तपोबल से तो भगवान् भी डरते है।

(जाना)

घण्टाकरण—हूं-(सिर हिलाकर अ र) शुद्धम् कुरु, पवित्रम् कुरु। (मणिकान्त से) अरे बाहरे तीरंदाज, तीन ही तीरो मे तपस्वी जा को वींध डाला।

मणिकान्त----क्यो ठीक रहा न ?

घण्टाकरण---ठीक और बिल्कुल ठीक।

मणिकान्त---तो अब मेरा काम ?

घण्टाकरण—राज लेना।

मणिकान्त—और तुम्हारा काम ?

घण्टाकरण---ब्याज लेना।

मणिकान्त—ध्यान रखना ?

घण्टाकरण—ध्यान है। (मणिकान्त का जाना) अहा हा हा हा हा, आज तो बड़ी मोटी आसामी हाथ मे आई। अगर यह राजा होगया तो सूद दर सूद मे इसका सारा राज न हड़प जाऊँ तो घण्टाकरण महाजन नहीं--

सरकारों को सर करने की है कलदारम् हो तलवारम् ।
भजकलदारम्, भजकलदारम्, भजकलदारम्, दिलदारम् ।।

❀ गाना ❀

—❀❀—

सब से बड़ा रुपैया, जग में सब से बड़ा रुपैया
जिस पै नहीं रुपैया, उसका कोई न भाव पुछैया ।।
जग में सब से बड़ा रुपैया ।
पत्नी भी पति से करती है, कङ्गाली में रार ।
पतिव्रता बन जाती है, जब आता है कलदार ।।
हां जी, हाँ जी, करने लगते हैं बाबा और भैया ।
जग में सब से बड़ा रुपैया ।
धनुआ धुनिय भ इस धन से बनता--धनपतराय ।
लिखुआ लोधी भी लहमें में होता-लखपतराय ।।
कलुआ कोली भी कहलाने लगता-कुलपतिराय ।
चमुआ चमड़ेवाला भी बन जाता-चम्पतराय ।।
जिसके पास रुपैया वह है सारे जग का भैया ।
जग में सब से बड़ा रुपैया ।
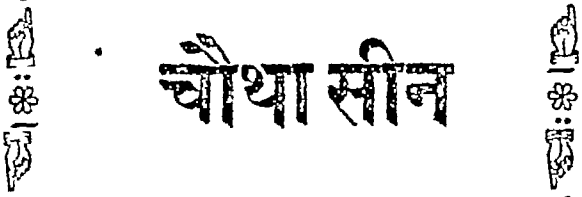
—※—

(जाना)
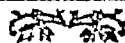
स्थान—अम्बरीष का हरि मन्दिर

(पद्मा के बनाये हुये फूलों वाले झूले में भगवान् शयन कर रहे हैं पद्मा एक ओर को बैठी हुई माला पिरो रही है)

गायन

पद्मा—

मेरे जीवन की माला के जीवन धन तार तुम्हीं तो हो।
इस हार में, जो उपहार को है, कर रहे विहार तुम्हीं तो हो॥
जभी पिरोती बैठकर मैं धागे में फूल।
तभी विरह के और भी चुभते तन में शूल॥
देखना डोर न यह टूटे, हाथ से छोर न यह छूटे।
माला और माला वाली का, सारा शृङ्गार तुम्हीं तो हो॥

माला बनाली, झूले को तो इससे पहले ही फूलों से सजा चुकी हूं। अब जाऊँ और पूजा के लिये निर्मल जल ले आऊँ। (ठहर कर) परन्तु-पद्मा-क्या प्राणनाथ तेरी इस नित्य की सेवा से किसी दिन प्रसन्न होंगे? क्यों न होंगे, यदि यह सेवा सच्ची है-यह हृदय सच्चा है-यह देवता सच्चे हैं-तो वे अवश्य प्रसन्न होंगे। (फिर ठहर कर) मैं कौन हूँ? इस अयोध्या नगरी के राजकुमार की पत्नी। किस राजकुमार की पत्नी? जो भगवान् की भक्ती के सिवाय और कुछ जानते ही नहीं। ब्याह के भी जिन्होंने-स्वयं न जाकर-अपनी कटार भेजी थी। जब ब्याही आई हूं-तब से आज तक-एक क्षण के लिए भी उनसे आंखें चार नहीं हुईं। इसीलिए तो-महीनों से उनके जागने के पहिले, उनके भगवान की सेवा किया करती हूं—

यही तो एक ढंग है, उनकी आँखों मे समाने का।
यही तो रास्ता है, अपने ठाकुर के भ भाने का॥
मै उनके हूं सहारे, और वे इनके स रे है।
दुचन्द क्य न चाहूं, यह मेरे प्यारे के प्र ॥

(पद्मा का एक ओर को जाना, दूसरी ओर से अम्बरीष का आना)
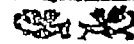
गाना

अम्बरीष--

रँग रँगरेजवा क्यों न रँगे ।
ऐसो चटक रँग--रँग रंगरेजवा, रँगते ही रँग चढ़े ॥
जीवन रूपी चादर मोरी, कर्म्म के ताग तगे ।
या चादर को ऐसो रँग दे कबहुँ न रँग उतरे ॥

—०—

मैं महीनो से देख रहा हूं-कि कोई भक्त-जन, बड़े सबेरे ही मुझ से पहले, मेरे भगवान् के मन्दिर मे आकर-बुहारी लगा जाता है, पूजा के वर्तन माँज जाता है, झारी मे जल भर कर रख जाता है ! आज मैं इसी टोह में-बड़ी जल्दी सरयू स्नान करके आया हूं (देखकर) है ! रोज की तरह आज भी वह भक्त अपना सेवा का कार्य कर गया । और आज तो एक नई वात दिखाई देती है--भगवान् का झूला फूलो से सजा हुआ है । पर--हॉ, जल की झारी नही है-सम्भव है जल लाने गया हो । छुप कर देखें तो, कि यह भक्तराज कौन है ?

(अम्बरीष का छुपना, पद्मा का जल लेकर आना)

पद्मा—

किसी ठाकुर की सेवा के लिये सरयू का यह जल है ।
किसी अवला की वहती नाव को वल्ली का यह वल है ॥

नहीं जल है ये झारी मे, भरे विरहिनि के आँसू हैं।
छलक कर यह बताते हैं कि--बेकल को नहीं कल है॥

अम्बरीष—ठहरो, जल की तरह निर्मल हृदय वाली सुन्दरी, तुम कौन हो ?

पद्मा--जल की तरह निर्मल हृदय वाली सुन्दरी को-वायु के समान छेड़ने वाले आर्य सन्तान आप कौन है ?

अम्बरीष--निःसन्देह तुम पूर्व जन्म की कोई भक्ति हो, तभी तो रात के पिछले पहर-मुझ से पहले, मन्दिर मे आकर सेवा कर जाया करती हो।

पद्मा—यह आपका मन्दिर है ?

अम्बरीष—(स्वगत) अहा-कैसी मीठी बोली है! (प्रकट) मन्दिर ? मेरा तो नहीं, मेरे भगवान् का है।

पद्मा—तो भगवान् के मन्दिर मे, हर एक को आने और सेवा करने का अधिकार है। इस एकान्त समय मे, अकेली और अनजान स्त्री के साथ बात करने का साहस करने वाले साहसी पुरुष, आप कौन हैं ? (स्वगत) एक दम भेद नहीं खोलना चाहिये।

अम्बरीष—मै अपने इन भगवान् का एक तुच्छ सेवक अम्बरीष हू। क्षमा करना देवी भगवान् के प्रति तुम्हारी परम-

प्रीति और आदर्श भक्ति देखकर हो, मुझे तुमसे बात चीत करने का साहस हुआ।

पद्मा—कुछ भी सही, हरि भक्त के हृदय मे तो-किसी समय भी-अनजान स्त्री से बात चीत करने का साहस पैदा ही नही होना चाहिये:—

डोरे ये बताते हैं, लगी डोर है कोई ।
बादल को देख, नाच उठा मोर है कोई ॥
आंखो की राह खुलगया, जो दिलका भेद था।
इन खिड़कियो से झाँक रहा, चोर है कोई ॥

अम्बरीप—सच कहती हो सुन्दरी। हे भगवान्, हे बैकुण्ठ-पति, हे त्रिलोकीनाथ, हे चराचर के नायक, मेरी बुद्धि कैसी होगई !-मुझे सँभालना ! मेरी रक्षा करना !

(गिर जाता है और मूर्छित हो जाता है)

पद्मा—अरे-यह तो मूर्छित होगये ? यह मैने क्या किया ? अपने कठोर शब्दरूपी कुल्हाड़े से-कमल के फूल पर प्रहार किया ? (पास बैठकर और आंचल से पंखा झलकर) राजकुमार ! लज्जित न हूजिये। इस मे आपका दोप नही है, प्रकृति ऐसा करा रही है ।

अम्बरीप—(जागकर) दोप तो मेरा ही है, मै अपनी कमजोरी का आप शिकार हुआ हूं। तुम अपने आंचल से मेरा

पंखा करके, मेरे व्रत को क्यों खण्डित करना चाहती हो ? यदि तुम हरिभक्ता न होतीं-तो मैं तुमसे इतनी बातें भी न करता।

पद्मा—अब तो आप अनजान स्त्री से बात चीत करने के दोषी होही गये। अब पछता क्यों रहेहैं! (हाथ पकड़कर उठाताहै) उठिये राजकुमार।

अम्बरीष—(स्वगत) ओह ! इस हाथ के लगते ही, सारे शरीर मे बिजली सी दौड़ गई। (प्रकट) सुन्दरी ! सुन्दरी !!

पद्मा—राजकुमार ! राजकुमार !! भगवान् के भोग के लिये थोड़े से फूल और लेआऊँ ।

(जाना चाहती है)

अम्बरीष—(रोककर) नहीं, अब मैं तुम्हे यहां से नहीं जाने दूंगा। तुम बताओ कि तुम कौन हो ?

पद्मा—फिर वही गले पड़नेवाली बात करने लगे राजकुमार अच्छा मै बताने को तैयार हूं कि मै कौन हूँ-पर एक शर्त पर।

अम्बरीष—वह शर्त क्या ?

पद्मा—पूरी करेंगे ?

अम्बरीष—अवश्य।

पद्मा—तो वह शर्त यह है कि-मुझसे विवाह करके, आप मुझे अपनी अर्द्धाङ्गिनी बनालें।

अम्बरीष—है! विवाह!–विवाह तो मेरा एक राजकुमारी से हो चुका है। हे भगवान्, आपकी इस पुजारिन ने मुझे कैसी उलझन में डाल दिया।

पद्मा—अजी अब सोच क्या कर रहे हैं, आप तो अपने भगवान् के सामने मुझे वचन दे चुके हैं।

अम्बरीष—क्षमा, देवी, क्षमा, मैं एक स्त्री के होते हुए, दूसरी स्त्री से विवाह नहीं कर सकता। नारी व्रत नहीं छोड़ सकता।

पद्मा—तो मैं भी पातिव्रत नहीं छोड़ सकती। आपको वर चुका हूँ, इसलिये आप ही की स्त्री होकर रहूंगी। क्या आप मुझसे विवाह नहीं करेंगे?

अम्बरीष—हां, नहीं करूँगा।

पद्मा—नहीं करोगे?

अम्बरीष—नहीं, नहीं,।

पद्मा—तो मैं इस जगह-और इसी समय इस कटार से अपना गला काट लूंगी।

(कटार से अपना गला काटने की चेष्टा करती है)

अम्बरीष—नहीं, नहीं, ऐसा भी न करो। (कटार छीन लेता है और फिर उस कटार को पहचानकर चौंकता है) हैं! यह कटार!

पद्मा—हां, आपकी यह कटार-अगर किसी राजकुमारी को वर सकती है तो उसका संहार भी कर सकती है।

अम्बरीष—पहचाना, पहचाना, इस कटार को भेजकर मैंने जिस राजकुमारी से विवाह किया था, वह तुम्हीं हो। तुमने मेरे भगवान् की सेवा करके आज मुझे प्राप्त कर लिया—पद्मे।

पद्मा—हाँ—मैंने आपके भगवान् की सेवा करके, अपने भगवान् को आज प्राप्त कर लिया। (पद्मा अम्बरीष के चरणों में गिरती है उधर सूर्योदय होता है)

अम्बरीष—उधर सूर्योदय हुआ और इधर आज से मेरे हृदय में तुम्हारा प्रेम उदय हुआ। जाओ अब भोग के लिये जो फल लाना चाहती थीं—वह ले आओ। (पद्मा जाती है, अम्बरीष ठाकुर जी के झूले के पास पहुंचता है और गाकर कहता है)।

जागिये जगदाधिराज, आज बड़ी बेर भई।
रजनी की नाश भयो, रवि को प्रभा फैल गई ॥

(दुर्वासा का अपने शिष्य रुद्रदत्त सहित आना)

दुर्वासा—कहाँ है वह पाखण्डी अम्बरीष ?

अम्बरीष—अहाहा हा, पधारिये, पधारिये, पधारिये महामुने, अहोभाग्य जो आपने पधारकर मुझे कृतार्थ किया:—

मुकुट और क्रीट के बदले, जटाओ को बढ़ाये हैं।
मेरे भगवान, शिव भगवान् बनकर आज आये हैं ॥

(चरण छूने की चेष्टा करना)

दुर्वासा—बस दूर हो। भक्ति और भगवान के ढोंगिये, तप और तपस्वियों की निन्दा करता है, और फिर चरण छूता है ?

अम्बरीप-तप और तपस्वियो की निन्दा ! नही भगवान्, इस दास से तो स्वप्न मे भी ऐसा नोच कर्म नहीं होगा ।

दुर्वासा—कपटी, छली, लम्पट, लवार, पाप और उस पर यह महापाप कि छुपाना ? फिर एक तपस्वी के सामने मुकर जाना ? तोते की तरह-विष्णु विष्णु की रट लगाने वाले खड़तालिये ! तू तप की महिमा क्या जाने ?-

तपस्वी, तप से, नूतन सृष्टि गढ़ सकता है चुटकी मे ।
सितारे गोढ़ सकता है, गगन से लाके धरिणी मे ॥
है उसका राज, सागर,भूमि, पर्वत, मेघ, बिजली मे ।
कि है उत्पत्ति और संहार सारा, उसकी भृकुटी मे ॥
प्रकृति का भार पुरुषोत्तम, तपोबल ही से धारे है ।
तुझे जिस का सहारा है, वो तप ही के सहारे है ॥

अम्बरीप-कृपानाथ, शान्त हूजिये । मुनियों का शृङ्गार तो शान्ति ही है ।

दुर्वासा-अरे मैं वह शान्तिस्वरूप मुनि नहीं हूँ । आ, यदि तप से भक्ति को बड़ा समझता है तो मुझ से शास्त्रार्थ कर । मै तुझे शास्त्रार्थ के लिये ललकारता हूँ । देखूं तो तू कितना सामर्थ्यशाली है;

अम्बरीप-सामर्थ्यशाली और मैं ? नारायण, नारायण मुनिराज, मेरा तो बल, ऐश्वर्य और सामर्थ्य सब मेरे यह

भगवान् हैं। भगवान् को छोड़ कर न मैं कोई शास्त्र जानता हूँ और न शास्त्रार्थ।

दुर्वासा—तो क्या तूने भक्ति का मण्डन और तप का खण्डन नहीं किया है?

अम्बरीष—मुनिराज, भक्ति मे तो जप, तप यज्ञ आदि सभी आ जाते हैं। फिर मै उसकी निन्दा क्यो करने लगा?

दुर्वासा—क्या कहा? भक्ति मे जप तप यज्ञ आदि सभी आ जाते है? झूट। भक्ति दूसरी चीज़ है और तप आदि दूसरी चीज़। फिर भक्ति की तप आदि से कोई बराबरा भी नही। भक्ति से यदि भगवान् मिल जाया करते तो-गर्मी, सर्दी, धूप, वर्षा, सहन करके, तपस्वी लोग बनो में तपस्या किस लिये करते? भक्ति से यदि मोक्ष प्राप्त हो जाया करती तो-यम, नियम आसन, प्रत्याहार, प्राणायाम, धारणा, ध्यान और समाधि लगा कर, योगीजन तपस्वियो की तरह अष्टाङ्गयोग का साधन किस वास्ते करते? अरे मूर्ख, मार्ग मे पड़ी हुई कंकड़ी का उतना मूल्य नही, जितना मूल्य, महान् परिश्रम करके, खान से निकाले जाने वाले हीरे का होता है।

अम्बरीष—महाराज, भगवान् सर्व व्यापक हैं,—वे न गर्मी, सर्दी, धूप, वर्षा देखते हैं, न आसन, प्राणायाम और समाधि। वे तो भक्ति—केवल भक्ति—देखते हैं। अगर उनके भक्त के हृदय-

भवन में-भक्ति का भरपूर भण्डार है, तो वे नरसिंह बनने के लिये भी तैयार है। खंभ फाड़ कर भी-अपने भक्त को दर्शन देने के लिये तयार हैः—
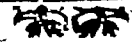
वेद तक भी भेद! जिन भगवान् का पाते नहीं।
ध्यान में जो योगियों तक के सहज आते नहीं॥
भक्त के हृद्धाम में वे नित्य करते वास है।
भक्त उनके पास है और भक्त के वे पास हैं॥

दुर्वासा—पर्दे का चोर झलकने लगा! तेरे इन्हीं विचारों से प्रकट होता है कि तू तप का विरोधी है। तुझे तेरे भगवान् ही की शपथ है-बता, स्पष्ट बता, तप बड़ा है या भक्ति?

अम्बरीष—(स्वगत) धर्म-संकट आगया। भक्ति को बड़ा बताता हूँ तो-तप का अभिमान रखनेवाले इन मुनिराज का जी दुखता है। और तप को बड़ा कहता हूँ तो आत्मा के विरुद्ध बोलना पड़ता है! फिर? फिर? क्या करूँ? चाहे कुछ भी हो-सत्य ही बोलूंगा। (प्रकट) तो कृपानाथ, इस दास के हृदय की आवाज़ तो यही है कि-भगवान् को प्राप्त करने के लिये भक्ति ही सर्वोपरि साधन हैः—

तेल बालू से निकल आना कठिन जग में नहीं।
नीर का घी में बदल जाना, कठिन जग में नहीं॥
पर दयालो-क्या कहूँ मैं-आप तो विद्वान् हैं।
भक्ति साधन के बिना, मिलते नहीं भगवान् हैं॥
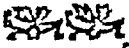
दुर्वासा—अच्छा देखना है-तेरी भक्ति, मेरे तप से कहाँ तक लड़ती है। यह तपस्वी, यह दुर्वासा, अपने कमण्डल का जल इस पृथ्वी पर डाल कर शाप देता है किः—

हरी भरी जल जॉय खेतियाँ, सूख जांय नदियां और ताल।
त्राहि त्राहि कर उठे अयोध्या, पड़ जाये वह घोर अकाल॥
रोक भक्ति बल से बिपत्ति यह, मत कर बातों की खिलवाड़।
फूट चुका है सर्वनाश को, तप का ज्वालामुखी पहाड़॥

(जाना)

रुद्रदत्त—अरे हमारे गुरुदेव का शाप तो-ब्रह्माण्ड तक व भस्म कर सकता है।

(जाना)

अम्बरीष—यह क्या हो गया ? मेरे द्वारा एक मुनिराज के हृदय को कष्ट पहुंचा ? हे भगवान्, हे पतितपावन, हे करुणा-निधान, हे अशरणशरण, मुझे तारिये। इस भँवर से मेरी नाव उबारिये।

(पृथ्वी पर गिरता है, पागलों की सी अवस्था हो जाती है, और फिर रोता है)

पद्मा—(आकर) दासी भोग के लिये फल ले आई। (देखकर) है! आप के नेत्रो मे आंसू क्यो है ? आप रो क्यों रहे हैं ?

अम्बरीष—प्रिये, मैंने आज तप से भक्ति को बढ़ाकर, तपस्वी दुर्वासा को दुःख पहुंचाया है। इसी से मेरा हृदय मुझे धिक्कार रहा है।

पद्मा—कुछ चिन्ता नहीं, भगवान् आपके हृदय को शान्ति देंगे। (मूर्ति से) हे त्रिलोकीनाथ, हे दीनदयाल—

बहाते थे हमेशा प्रेम में जो आपके आँसू!
उन्हीं नयनों से अब झरते हैं, पश्चात्ताप के आँसू!!
प्रलय हो जायगी पल में, जो टपकीं और बूंदें यह।
जहां पर आप रहते हैं, वहां सन्ताप के आंसू?

विष्णु—(झूले में से प्रकट होकर) मेरे प्यारे भक्त अम्बरीष, और मत रोओ। मुनि को तो उन्हीं के क्रोध ने दुःख पहुंचाया है, तुमने नहीं। तुम तो निर्दोष हो:—

क्रोधी दुर्वासा-अपने को समझ रहे हैं तपोधुरीण।
किंतु उन्हीं का क्रोध करेगा, क्रम क्रम से उनका तप क्षीण॥
शत्रुपक्ष के आक्रमणों से नित्य तुम्हें रखने को मुक्त।
चक्र सुदर्शन को करता हूँ, भक्त तुम्हारे पास नियुक्त॥

(चक्र की नियुक्ति)

अम्बरीष और पद्मा—जय, जय, त्रिलोकीनाथ भगवान् की जय।

—❀❀❀—
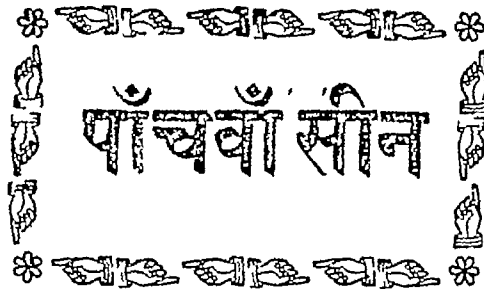
स्थान—घण्टाकरणका मकान ।

(घंटाकरण की स्त्री लीला का प्रवेश)

❀ गाना ❀

—०—

लीला—

क्या कहूँ ? पड़ा नास्तिक पति से पाला है ।
पातिव्रत ने मुंह पर ताला डाला है ॥
घर की गाड़ी दो पहियों से चलती है ।
ताली सदैव दो हाथों से बजती है ॥
पति-पत्नी में हो भेद तो कब पटती है ।
पत्नी परवश होकर घुटती रहती है ॥
भीतर ही भीतर जलती एक ज्वाला है ।
पातिव्रत ने मुंह पर ताला डाला है ॥

मेहनती भी है, कमाऊ भी हैं, धनवान् भी हैं, विद्वान् भी हैं, परन्तु--भगवान् के नाम से बेहद चिढ़ते है। पति होने के कारण-मै तो उन्हे अपना भगवान् मानती रहूँ और वे अपने भगवान् का नाम तक कभी न ले, कैसी बेजोड़ बात है। जब जब मैं उनसे कहती हूँ कि-भगवान् का भी तो नाम लिया करो, तो दोनो कान हिला दिया करते है-और कहदिया करते है कि-"चुप होजा, फिर यह नाम न लेना, यह नाम लेने और सुनने मे पातक लगता है, अगर इस पातक से बचना चाहती है तो तू भी अपने कानो मे घंटे बांध ले।" अब क्या करूँ ? हे नारायण-

घण्टाकरण—(थैली के साथ प्रवेश करके) ऊँ हूं हूं हूं। (थैली से) हे सर्वव्यापक—

लीला—(आकाश की ओर देखकर) हे भगवन्—

घण्टाकरण—(शिर हिलाकर) ऊँ हूं हूं हूं। (थैली से) हे सब के पालक पोषक—

लीला—(पूर्ववत् आकाश की ओर देखकर) हे जगन्नाथ—

घण्टाकरण—(पूर्ववत् शिर हिलाकर थैली से)-ऊँ हूं हूं हूं। हे सर्वशक्तिमान्—

लीला—जगत्पति, मेरे पति को ऐसी बुद्धि दीजिये कि वह आपके भक्त बन जायें।

घण्टाकरण—कलदार जी, मेरी स्त्री को ऐसी बुद्धि दीजिये कि वह आपकी भक्तनी बनजाय।

लाला— घण्टाकरण को देखकर) ओहो, आप आगये ? मैं तो समझी थी कि मणिकान्त के लिये, राय का सौदा करते करते-अपना भी सादा आपने कहीं कर डाला । ऐसी भी परोपकारी किस काम को ? न खाना, न पीना, न सोना, न न्हाना, परसों से अब सूरत दिखाई है ।

घण्टाकरण—अरी, कमाई बड़ी मुश्किल से हुआ करती है । मर्द ही उस मुश्किल को जानते हैं । घर मे चर्खा कातनेवाली औरतें क्या जानें । परसों से एड़ी चोटी का पसीना जब एक कर डाला, तब कहीं यह हजार रुपये का थैला हाथ आई है ?

लीला—यह कहाँ से पाई है ?

घण्टाकरण—पाता कहाँ से ? मणिकान्त ही से प्राप्त हुई है ।

लीला—हाँ तुम तो 'लल्ला' पढ़े हो 'दद्दा' पढ़े ही नहीं ।

घण्टाकरण—यह तो मेरे पढ़ानेवाले की अक्लमन्दी है कि उसने मुझे 'जमा' पढ़ाई 'तफरीक़' पढ़ाई ही नहीं ।

लीला—राय खरीदी जारही है । उनके खरीदने के लिये दल्लाल मुकर्रर होगये । इतना अधर्म ? इतना महा पाप ? महाराज, जब सब कुछ यहीं छोड़ जाना है तो इतनी लिपिस्या किसलिये ?

घण्टाकरण—अरी यह लिपिस्या तेरे पेट मे जो बच्चा है उसके लिये है ।

इश्वर भक्ति

लीला—वाह ! गांव बसा नही, बिल्लियाँ पहले बोलने लगीं।

घण्टाकरण—माँ बाप का यह फ़र्ज है कि-बच्चो के लिये दौलत छोड़ जायँ ।

लीला—नही-मां बाप का यह फर्ज है कि-बच्चों को दौलत पैदा करने वाला बना जायें।

घण्टाकरण—तो तुम्हारी राय में-बच्चो के लिये दौलत छोड़ जाना बुरा है ?

लीला—इसका जवाब-अपने पड़ोसी साहू साहब से पूछिये। वे जब पाप कर्म मे दौलत उड़ाने बैठते हैं तो यह बात पहले कह देते हैं कि-इसमें हमारा क्या कुसूर, यह तो हमारे बाप की बेवकूफी है जो वह हमारे उड़ाने खाने को दौलत छोड़गया ।

घण्टाकरण—अरी, उन साहू साहब का बाप बेवकूफ था या अक्लमन्द-उससे मतलब नहीं। मै तो अपने बेटे को,अपनेसे ज्यादा कलदार का भक्त बना जाऊँगा, जरा उसे दुनियां मे आ तो जाने दे।

लीला—रहने भी दो। आप डूबे सो डूबे दूसरे को भी डुबाने का अभी से विचार कर रहे हो।

घण्टाकरण—अरी डूबना कैसा ? कलदार के जहाज से तो लोग भवसागर तक के पार उतर जाते हैं । मैं तो इस कलदार की कृपा से अब फिर संसार मे नहीं आऊँगा,और अगर आया भी तो कलदार ही बनकर आऊँगा।

लीला—अगर कलदार बनकर संसार में आओगे—तो कोई थैला में बन्द करलेगा।

घण्टाकरण—क्या डर है, दशहरे दीवाली को पूजा तो हुआ करेगा। ले अपने जन्म जन्मान्तर के इन पतियों को-तिजोरी मे रख आ।

(थैली देता है)

लीला—(थैली फेंककर) मुझे यह पाप की कमाई नहीं चाहिये।

घण्टाकरण—है, कलदार महाराज का इतना अपमान!

(थैली उठाकर उससे अपमान की क्षमा माँगता है)

लीला—यह अपमान कुछ उस अपमान से बड़ा थोड़े ही है-जो कानों मे घण्टे बाधकर भगवान् के नाम का किया जाता है।

घण्टाकरण—(सिर हिला कर) हूं हूं हूं हूं। उसका अपमान करके तो मरकर नरक मे की बात सुना करते हैं, पर इनका अपमान करने से जीते जी नरक है। जा, मेरी ख़ज़ांचिन, मेरी आज्ञा है, पति की आज्ञा है, कि-इस थैली को घर के ख़ज़ाने में डाल आ।

लीला—हाय रे पातिव्रत धर्म! (थैली लेकर) आज्ञा से लाचार हो जाया करती हूं।

(जाना)

घण्टाकरण—

स्वर्ग नरक सब जितने भी हैं, उनका यह ही ठेकेदारम्।
भज कलदारम्, भज कलदारम्, भज कलदारम् दिलदारम्॥

टैनी—(प्रवेश करके) सरकार! सरकार!!

घण्टाकरण—क्या है टैनी?

टैनी—सरयूपार से कल्लूमल, छल्लूमल, लल्लूमल और मल्लूमल नाम के चार मोटे मोटे मच्छ आये हैं।

घण्टाकरण—अबे तो क्या मैं मच्छों पर जाल डालने वाला मछुआ हूं?

टैनी—मैं भूला सरकार, चार पंछी आये है।

घण्टाकरण—अबे तो क्या मै पंछियो को फॉसने वाला चिड़ीमार हूं?

टनो—मैं भूला सरकार, चार सिर मुंडवाने वाले यात्री आये हैं।

घण्टाकरण—अबे तो क्या मै सिर मूंडने वाला नाई हूं?

टैनी—सरकार बुरा न मानें तो कहूं, सूद की सुई तो नाई के उस्तरे से कहा ज्यादा पैना हुआ करती है। यह चुभकर इस तरह क़िस्तवार खून निकाला करती है कि पता भी न लगे और आदमी का भी ढांचा ही ढांचा रहजाय। गजब तो यह है कि-

तीर तलवार के वारों मे है क़ानून का डर—
चाकुओं तक का लड़ाई मे, गुनह शायद है।
सूद की मार का सरकार मे कुछ जुर्म नहीं—
इस पै होती नहीं कोई भी दफा आयद है ॥
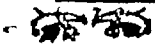
घण्टाकरण—अबे बन्द कर टर्राना। वे चारो भले आदमी यही आगये।

टैनी—लीजिये-सरकारी कुंये के मेडक ने टर्राना बन्द कर दिया। उन भले आदमियो को अब आप कलदार के अखाड़े मे चारो खाने चित्त लाइये।

(चारो शख्शो का आना)

चारो—शेठजी जय नारायण।

घण्टाकरण—हूं हूं हूं हूं कलदार की जय बोलो—

कलदारम् हा की जयकारम्, कर सकती है वेड़ापारम्।
भज कलदारम्, भज कलदारम्, भज कलदारम्, दिलदारम ॥

कल्लूमल—अच्छा कलदार ही की जय।

टैनी—ऐसे नही, जैसे मै बताऊँ वैसे इस पवित्र नाम का उच्चारण करो।

कल्लूमल—बताइये।

टैनी—कहो-जिस पर कलदार है-उसको हम अपना माई बाप समझते हैं।

चारों—जिस पर कलदार है उसको हम अपना माई बाप समझते हैं।

टैनी—कलदार के स्वामी को आज्ञा-हम जगत् के स्वामी को आज्ञा समझते हैं।

चारो—कलदार के स्वामी की आज्ञा-हम जगत् के स्वामा की आज्ञा समझते हैं।

टैनो—अब तुम्हारी शुद्धी हो गई। (घण्टाकरण से) शेठजी ? अब इन पर अपनी कृपा कीजिये।

घण्टाकरण—तथास्तु। कहो! क्या चाहते हो ?

कल्लूमल—कुछ रुपया कर्ज चाहते है शेठजी।

टैनी—शेठजी कर्ज चाहते है या तुम ?

कल्लूमल—हमीं चाहते हैं तभी तो शेठजी के द्वारे आये हैं।

घण्टाकरण—तुम तो बड़े रुपये वाले थे कल्लूमल, आज कर्ज मांगने को नौवत क्यों आगई ?

कल्लूमल—क्या बताऊँ शेठजी। मेरे मकान का एक बरसाती परनाला मेरे भाई के मकान मे जाया करता था। एक दिन मैंने उस बरसाती परनाले को-बारामासी परनाला बना लिया, भाई ने उज्र किया, मैंने मुकदमा चलाया, आज पूरे ग्यारह वर्ष होगये, मुकदमा खतम नही हुआ मै खत्म होगया, सात लाख उस परनाले की नजर कर दिया।
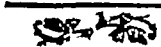
टैनी—वाहरे लड़ाके, खूब भाई से लड़ा, तूने तो वहा मसल की—

सभी घर बार लुटाऊँगा, पनाला यहीं गिराऊँगा ।

घण्टाकरण—(डल्लूमल से) अच्छा, अब तुम अपनी कहानी सुनाओ ।

डल्लूमल—मै क्या बताऊँ, अपने लड़के की शादी करने के लिये मैंने जिस लड़की को पसन्द किया-पहले तो उसके बापको बीस हजार रुपये दिये, फिर उस शादी मे दो लाख लगा दिये।

टैनी—क्या बेपर की उड़ाई है ।

डल्लूमल—बेपर की नहीं उड़ाई है भाई, लड़को वाला ज्यादा कुलीन था, इसलिये उसे रुपया देना पड़ा, और सारे शहर को दावत दी । इसलिये ब्याह का खर्च बढ़ गया ।

घण्टाकरण—हाँ-लड़के की शादी में, दो लाख खर्च हो जाना क्या बड़ी बात है । जेवर बना होगा, आतिशबाजी छूटी होगी, बखेर हुई होगी, और महफिलें भी तो की होंगी।

डल्लूमल—हाय, वही महफिलें तो आज मेरा काल होगईहैं।

टैनी—हैं! काल क्यों होगई है । उन महफिलों मे तो बड़ा मजा आया होगा। खूब सारंगियें मिली होंगीं, खूब तबले पर थापें पड़ी होंगीं ।

घण्टाकरण—(टैनी के चपत मारकर) चुप बे ।
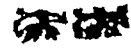
डेल्लूमल—एक थाप मुझ पर भी ऐसी पड़ी कि मैं बोलगया।

टनी—और एक थाप मुझपर भी पड़ी कि मैं बोल गया।

डल्लूमल—उन्हीं महफिलो की एक वेश्या को अपने घर मे डाल कर-मेरे लड़के ने मेरी पन्द्रह लाख की सम्पत्ति स्वाहा करदी।

घण्टाकरण—बड़ा बुरा हुआ। (लल्लूमल से) अब आप कहिये ?

लल्लूमल—मेरा तो सट्टे ने फट्टा लौट दिया।

घण्टाकरण—(मल्लूमलसे) और तुम्हारा ?

मल्लूमल—घर के बढ़े हुए कुनवे ने दिवाला निकाल दिया।

घण्टाकरण—(चारों से) तो अब तुम्हे कितनो रुपया कर्ज़ चाहिये।

कल्लूमल—पच्चीस पच्चीस हज़ार।

घण्टाकरण—क्या करोगे ?

कल्लूमल—कुछ रोजगार करेंगे और क्या करेंगे।

घण्टाकरण—रोजगार अगर करना है तो हम जो बतायें वह करो।

कल्लूमल—बताइये ?

घण्टाकरण—मणिकान्तजी के लिये रायें इकट्ठी करो। सौ रुपया फी राय हम तुम्हे देंगे।

मल्लूमल—नहीं शेठजा, यह पापका काम हमसे नहीं होगा।

घण्टाकरण—अरे इसमे पाप क्या है ?

मल्लूमल—पाप तो बहुत है—

जब्र या लालच से अपना राय गर बदलेंगे हम।
आत्मा का खून होगा, खुद को धोखा दगे हम॥

घण्टाकरण—तो जाओ, तुम्हे रुपया कर्ज नहीं मिलेगा।

मल्लूमल—न सही, हम दूसरी जगह जाकर सवाल करलेगे।

कल्लूमल—चुप रह, तू तो पागल है हम शेठजी से ही रुपया लेगे। हमेशा से हमारा लेन देन इसा घराने से रहा है। शेठजी, अपनी राय तो हम जुरूर उसी को देंगे जिसके लिये आपकी सिफारिश होगी, दूसरे की कहते नही।

घण्टाकरण—अजी आप चाहेंगे तो वहुतो को राय दिलवा देंगे।

कल्लूमल—हाँ-इसकी तनतोड़ कोशिश करेंगे।

घण्टाकरण—पक्की रही ?

कल्लूमल—हां—पक्की रही।

घण्टाकरण—तो पच्चोस पच्चीस तोड़े भी पक्के रहे।

टैनी—और सूद ?

घण्टाकरण—अरे सूद तो हमारे बाप दादा के वक्तों से एक आना रुपया -तय है।

टैनी—और दर सूद ?

घण्टाकरण—दरसूद जो सब से, वही इनसे--तिमाई।

टैनी—और सरकार मेरा हक ? मैं अपनी अधन्नी रुपया नहीं छोड़ूंगा।

लल्लूमल—अरे बावरे, इकन्नी का सूद, उस पर तिमाई दर सूद और फिर नौकर की दस्तूरी का अधन्नी रुपया। इस तरीके पर कर्ज लेना तो जान बूझकर गला कटाना है।

टैनी—नहीं--सीधे परमधाम पहुंच जाना है।

घण्टाकरण—अरे भाई, बिना आड़ का रुपया तो इससे कम पर मिल ही नहीं सकता, सूद की कमी चाहते हो तो घर का मकान या जेवर आड़ करो।

लल्लूमल—अच्छा शेठ जी, आपका जो जी चाहे वह ले लीजिये। हमे रोजगार से तो लगा दीजिये।

घण्टाकरण—अच्छा टैनी, इन्हे मुनीमजी के पास लेजाओ, (आदमियों से) आप लोग बही पर दस्तखत तो कर ही देंगे।

लल्लू—जी हॉ, ।

टैनी—दस्तखत नहीं कर सकेंगे तो अँगूठा लगवा लिया जायेगा। और रुपया तो पुराने ही क़ायदे से दया जायेगा न ?

घण्टाकरण—अबे हां, हाँ।

लल्लूमल—यह पुराना क़ायदा कैसा ?

टैनो—तुम उसे समझकर क्या करोगे ? वह तो घर का हिसाब है। चलो, नहीं तो मुनीमजी रोकड़ बन्द करदेगे।

चारों—अच्छा शेठ जी, जय कलदारम्।

घण्टाकरण—जय कलदारम् भाई जय कलदारम्।

(चारों का जाना)

टैनी—त।पुराने क़ायदे के अनुसार पच्चीस हज़ार के पैंतास हज़ार ही त।बही पर चढ़ाये जायगे न ?

घण्टाफरण—अबे, हाँ, हाँ, दो का आँकड़ा सहज ही में तीन का आँकड़ा बन सकता है।

टैनी—बनने को तो दो का आँकड़ा पांच का भी आँकड़ा बन सकता है।

घण्टाकरण—इसमे भी कुछ पाप नहीं। दौलत इसी तरह बढ़ा करती है। दौलत बढ़ाने के बाज़ार में बेईमानी ईमानदारी समझी जाती है।

टैनो—तब तो मै पच्चोस के पचपन ही वहा मे चढ़वाता हूँ।

घण्टाकरण—

थैली मे आ कलदारम, यह ही सच्चा धर्म्माचारम्।
भजकलदारम् भजकलदारम्, भजकलदारम दिलदारम्॥

गाना

—※—

जैसे भी हो कमाओ कलदार,
दुनिया कलदार ही से है गुलज़ार।
सूद, दलाली, बदनी, सट्टा,
रुक्का, पर्चा, हुण्डी, पट्टा।
गिरवी गाँठा, बोनी, बट्टा,
सब में कलदार ही की है झनकार॥
छीन, झपट्टा, फांसा, फन्दा,
लूट, खसोट ठगी का धन्धा।
राजदण्ड, रैय्यत का चन्दा,
सबमें कलदार ही की है जयकार॥

—※—

स्थान--राज का कोठार

कोठार के चबूतरे पर कोठारी खड़ा है। उसके चारों तरफ़ अकाल-पीड़ित कई पुरुष और कई स्त्रियां हैं। चबूतरे के नीचे-दाने बिखरे हुए हैं जिन्हें कितने ही अकाल-पीड़ित बालक बीन बीन कर खा रहे हैं। राज्य का एक सिपाही उन बालकों को हटाने की चेष्टा कर रहा है।

पहला अकाल पीड़ित—हे कोठारी बाबा, एक-केवल एक ही-मुट्ठी दाने देदो, मेरे बेटे को आज तीसरा फ़ाका है।

एक बच्चा—हाय, भूख के मारे बोला तक नहीं जाता!

एक अधेड़ स्त्री—माई बाप, कोख मे गड्ढे पड़ गये है-पेट पीठ से लग गया है-अँतड़ियाँ सूखी जा रही है-टाँगें लड़खड़ा रहा हैं! यह पथराई हुई आँखें, यह बाहर निकली हुई आंखें, ज़िंदगी की आखिरी घड़ी मे-तुम्हारे कोठार की तरफ़ ताक रहा हैं! पाव भर नहीं तो आधपाव-नहीं तो छटाँक भर ही-अन्न दे दो, अकाल ने हमे बेजान कर दिया है।

कोठारी—जाओ--भाग जाओ, कोठार के सब गेहूँ घुन गये।

दूसरा अकाल पीड़ित—तो हम घुने हुए ही खालेंगे।

कोठारी—चॉवलो मे सुड़ियाँ पड़ गयीं।

तीसरा अकाल पीड़ित—हम वही चबालेगे।

कोठारी—अबे तो क्या यह तुम्हारे बाप दादा का माल है जो खा जाओगे और चबा जाओगे? भूखे हो तो किसी दूकान से जाकर अन्न खरीदो।

पहला अकाल पीड़ित—अन्नदाता, किसी दूकान मे अन्न नहीं रहा।

कोठारी—तो फल खाओ।

दूसरा अकाल पीड़ित—फल क्या, पेड़ो मे पत्ते तक नहीं रहे, छाल तक नही रही।

(एक लड़की की तरफ़ इशारा करके)

चाहे मेरी इस लड़की को मुफ्त से ले लो, पर थोड़ा सा अनाज मुझे देदो। अगर आपने दया नही की तो हम गरीब बेमौत मरजायेंगे।

कोठारी—मर जाओगे तो क्या दुनिया सूनी हो जायेगी? न जाने तुमसे कितने मकोड़े रोज़ पैदा होते और मरते हैं।
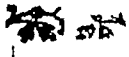
चौथा अकाल पीड़ित—हाय-

नहीं कोठार है यह, हम ग़रीबों का पसीना है।
कि जिसको राज-कर कह कर तेरे राजा ने छीना है॥
ग़ज़ब है माल अपना, आज मालिक छू न सकते हैं।
जो सच्चे अन्नदाता हैं, वो दाने को तरसते हैं॥

तीसरा अकाल पीड़ित—ढाल दो चबूतरे पर से इस कोठारा को, और लूट लो यह कोठार।

राज का सिपाही वा कोठरी—ठहर तो जाओ वे पाजियों।

(यह दोनों अकाल पीड़ितो को आगे)
बढ़ने से रोकते हैं, मणिकान्त आता है)

मणिकान्त—क्या है ? क्या है ? कोठारी ? कोठार के आगे यह कैसा कोलाहल है ? यह कैसी भीड़ भाड़ है ?

कोठारा—सरकार, यह लुटेरे कोठार को लूटने आये हैं।

पहला अकाल पीड़ित—नहीं राजकुमार, हम सब पेट के मारे हुए प्रजावृन्द, आपके कोठार से एक मुट्ठी अन्न की भीख माँगने आये हैं।

मणिकान्त—जाओ बे, मैं भीख मांगने वालों को अपने राज्य का कलङ्क समझता हूँ। भिखमङ्गे, मुफ्त का खा खाकर, देश को लजाया करते हैं।

चौथा अकाल पीड़ित—धर्म्मावतार, हम भिखमंगे नहीं, भले घरों के स्त्री पुरुष हैं-जो अकाल के हाथों सताए हुए हैं। सच

तो यह है कि-माँगने के लिये कोई किसी के यहाँ अपने आप नहीं आता, विपत्ति सबको सम्पति के द्वार पर खींच लाती है।

मणिकान्त—अबे भाग जाओ, तुम्हारे यहां खड़े रहने से हवा ख़राब होती है।

चौथा अकाल पीड़ित—हवा खराब होती है? आज हमारे यहा खड़े रहने से हवा ख़राब होती है? अब तक हमारी ही बदालत तुम राजकुमार कहलाते रहे हो और अब हमसे इतनी घृणा?

तीसरा अकाल पीड़ित—जिस राजा के कुमार की ऐसी नियत है, उसके राज मे अकाल क्यो न पड़े।

मणिकान्त—अबे बरसाती कीड़ो, तुम्हीं अपनी दरिद्रावस्था की सड़ी हुई हवा से-राज मे तरह तरह की बीमारियां फैलाया करते हो। तुम्हीं अपनी गन्दी साँसो से, खाते, पीते, अकाल अकाल चिल्ला कर--देश मे एक कोहराम मचाया करते हो। चले जाओ, नहीं तो अपने कोड़े की मार से, तुम्हारी खालें उड़ादूंगा।

चाथा अकाल पीड़ित—और क्या करोगे? खाल ही उड़ाओगे?

पहला अकाल पीड़ित—मार, मार, भूखो की मारी हुई-इस देह पर, राजकुमार, तू भी कोड़े मार।
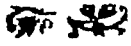
मणिकान्त—(कोड़ा मारकर) ले, (दूसरा कोड़ा मारकर और ले ।

पहला अकाल पीड़ित—हाय !

तीसरा अकाल पीड़ित—

जगत्पति, क्यो नही सुनता पुकारें अपने बेटो की ।
उधर है मार कोड़ो की, इधर है मार पेटो की ॥
वहाँ मैया विलखती है, यहाँ बच्चा तड़पता है ।
किसी ने मुंह जरा खोला तो कोड़ा तड़ से पड़ता है ॥

मणिकान्त—(कोड़े मारकर) तू भी ले ।

चौथा अकाल पीड़ित—भाइयो, अब क्या देखते हो, इसी कोड़े के नीचे समाप्त हो जाओ ।

सब अकाल पीड़ित—(आगे बढ़कर) अच्छा, हम सबको कोड़ो से मार डाल ।

मणिकान्त—दुराग्रहियो, ऐसे नहीं मानोगे । (सिपाही से) सिपाही, इन सबको धक्के मार मार कर यहाँ से निकाल दो। फिर भी यह नहीं निकलें तो सेना को बुलालो ।

(आना)

कोठरी—अबे चले जाओ, नहीं तो सेना के आने पर गोला चल जायेगा ।

दूसरा अकाल पीड़ित—अब तो हमारी अर्थियाँ ही यहां से उठेंगी ।

(अम्बरीष का भूदेव के साथ प्रवेश)

अम्बरीष—क्यो,-क्यों,-कोठारी, यह ग़रीब क्यों चिल्ला रहे है ?

कोठारी—श्रीमान्, इन लुटेरो ने, बाज़ार की सब दूकानें लूटकर, कोठारपर चढ़ाई को है।

पहला अकाल पीड़ित—नहीं कृपानाथ, हम अकाल पीड़ित आपके राज मे भूखे मर रहे हैं-और यह कोठारी एक मुट्ठी अन्न तक नहीं देता।

कोठारी—अन्नदाता, राजपरिवार के गुज़ारे लायक़ ही अन्न कोठार मे है। महाराज का हुक्म है कि कोठार मे से एक दाना भी किसी को न दिया जाय।

अम्बरीष—प्रजा भूखों मरे-और राजपरिवार के भविष्य के लिये कोठार में अन्न भर कर रक्खा जाय ? यह कैसा स्वार्थ है। क्या राजपरिवार के लिये भगवान् नहीं हैं ?

(दो सिपाहियो के साथ एक बूढ़ी स्त्री का प्रवेश)

बूढ़ी—दुहाई राजकुमार की, मुझपर बड़ा जुल्म हुआ है।

अम्बरीष—यह बुढ़िया कौन है ?

सिपाही—यह राज की अपराधिनी है, राजकुमार।

अम्बरीष—इसने क्या अपराध किया ?

सिपाही—राज के बाग़ की दीवार पर लटकती हुई पेड़ों की डालियों से यह पत्ते तोड़ रही थी।

अम्बरीष—मैं कैसे मानलूं ? राज के बाग की दीवार पर लटकती हुई पेड़ो की डालियाँ इतनी ऊँची हैं कि जमीन पर खड़े होकर इस बूढ़ी का हाथ उन तक पहुंच सकता ही नहीं।

सिपाही—तो यह बूढ़ी जमीन पर खड़ी होकर पत्ते कब तोड़ रही थी।

अम्बरीष—तब ?

सिपाही—बात बेढब है-पर है बिल्कुल सच। नीचे ऊपर चार पांच मुर्दे की लाशें रखकर-और उन पर चढ़कर-यह पत्ते तोड़ रही थी।

अम्बरीष—ओह ! वह लाशें वहां कैसे आईं ?

बूढ़ी—यह मैं ही बताये देती हूँ अन्नदाता, शपथ है आपके श्रा चरणों की-सच ही कहूंगी। यह बूढ़ी आजतक झूंठ बोलीही नहीं है। वे लाशें मेरे बेटो की थीं-जिन्होने अकालके कारण अपने प्राण त्याग दिये। मेरे पेट की ज्वाला जब मुझ से न दब सकी, तो मैं-अपने उन्हीं प्राण प्यारो की छाती पर पांव रखकर अपनी क्षुधा शान्ति के लिये पत्ते तोड रही थी, इतने में इन सिपाहियों ने पकड़ लिया।

अम्बरीष—हे भगवन, हे त्रिभुवननाथ, इन दुखियो का दुःख मुझसे नहीं देखा जाता। तपस्वी दुर्वासा का शाप सच्चा होगया, अब आपकी कृपा क्या अपना प्रभाव नहीं दिखायेगी ?

(कोठारी से) कोठारी, मैं हुक्म देता हूं कि-इन भूखों, के लि कोठार का दरवाज़ा खोल दो। तुम नहीं खोलते हो, तो मैं खोले देता हूं।

(कोठार की तरफ बढ़ना)

कोठारी--लुटादो. मेरे बाप का क्या जाता है।

अम्बरीष--(कोठार का द्वार खोलकर) लो मेरे भाइयों, जितना जी चाहे-इस कोठार से अन्न ले जाओ। (बूढ़ी से) माई, तुम भी ले जाओ। (सिपाहियों से) सिपाहियो, इसे छोड़दो।

कोठारी--अभी जाकर महाराज को यह समाचार देता हूं।

(कोठारी चला जाता है। भूखे कोठार से अन्न ले लेकर जाते हैं, बूढ़ीभी अन्न लेकर आशीर्वाद देती हुई जाती है। सिपाही जो बूढ़ी को पकड़ के लाये थे, वापिस चले जाते हैं)

सब भूखे--जय हो-राजकुमार की जय हो। भक्त अम्बरीष की जय हो।

बूढ़ी--कृपानाथ, आप जुग जुग जीते रहें।

(अम्बरीष तथा भूदेव के अतिरिक्त सबका जाना)

अम्बरीष--क्यों शास्त्री जी, क्या सचमुच कोठारी को महाराज ने आज्ञा दी थी कि-कोठार के अन्न मे से एक दाना तक भूखों को न दिया जाय ?
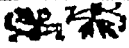
भूदेव—नहीं राजकुमार, महाराज ऐसी आज्ञा कभी नहीं दे सकते, कोठारी आप से झूँठ बोल गया।

अम्बरीष—यह झूँठ क्या बोलता है?

भूदेव—इसलिये कि-यह तो कोठार से अपना घर भरता है। अगर कोठार से अपना घर नहीं भरता है-तो तीस रुपये महीने मे-हजारो रुपये का लेन देन कहाँ से करता है? और शास्त्र भी यही कहता है—"क्रियाकलापः पुरुषःपरीक्ष्यते"।

अम्बरीष—चलो उसकी वह जाने, भगवान् ने भूखों को तो सुन ला—

जो चीटी को कन भर देता, हाथी को मन भर देता है।
वह दीनानाथ-दयासागर-यो दीनो की सुधि लेता है॥

कोठारी—(नाभाग, सुकेशी तथा मणिकान्त के साथ आकर) देखलीजिये महाराज, कोठार का द्वार खुला है।

सुकेशी—अब वहाँ है ही क्या? दाना तक नजर नही आता। (नाभाग से) क्यो महाराज, इन्ही करतूतो पर अम्बरीष राजा बनाया जायगा? आज कोठार लुटाया है-कल राज लुटा देगा।

नाभाग—अम्बरीष सुना रहा है? तेरी माता क्या कह रही है।

अम्बरीष—मैंने कोठार लुटाया? नहीं माता जी नह पिता जी—

वास्तव मे जिसका था कोठार यह,
जिसने अब तक था भरा भण्डार यह।
लेगया भूखों की सूरत में वही,
चीज़ जिसकी थी उसी पर तो रही ?

मणिकान्त—फिर वही खड़तालवाला राग शुरू हुआ। अगर अपने भगवान् को आप इतना सर्व व्यापक मानते हैं-तो इस भण्डार को अभी उनसे भरवाइये। नहीं तो-आज से अपने इस ढोंग और ढकोसले को छोड़कर, हमसे प्रत्यक्षवादियों की पंक्ति मे आजाइये।

अम्बरीष— आकाश की ओर देखकर —

हे करुणानिधि, कुछ कान करो, अब आन पै आकर अटकी है।
नास्तिकता ने मँझधारा मे, विश्वास की नैया पटकी है॥
अस्तित्व की आज जो लाज रहे, घटना ये घटी झंझट की है।
हो जाउ प्रकट, घट घट वासी, क्यों ओट करी घूंघट की है?

(कोठार मे नाज भरा हुआ दिखाई देता है आखिरी बोरा भगवान् अपने हाथ से रखते हुये दिखाई देते हैं)

भूदेव—जय, जय, वैकुण्ठनाथ भगवान् की जय।
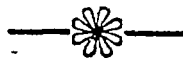
स्थान--जङ्गल

(तपस्वी दुर्वासा का रुद्रदत्त सहित आना)

दुर्वासा—भूः भुवः स्वः-बस स्वर्गलोक के राजा इन्द्र को बुलाना पड़ेगाः—

वज्राधीशं, बलाधीशं, स्वर्गाधीशम् सुरेश्वरम् ।
जीवनं सर्वजीवानामिन्द्रमावाहयाम्यहम् ॥

(नैपथ्य की ओर फल फेंकते हैं)

इन्द्र—(आकर) तपस्वीवर, क्या आज्ञा है ?

दुर्वासा—आज्ञा ? तुझे आज्ञा देने के लिये नहीं बुलाया है, सचेत करने के लिये बुलाया है-सावधान करने के लिये बुलाया है।

इन्द्र—सचेत ! सावधान ! यह क्या कह रहे हैं भगवन् !

दुर्वासा—ठीक कह रहा हूँ । तुझे कुछ खबर है कि अम्बरीष क्या कर रहा है ? वह कल का छोकरा, अपने भक्ति बल से तेरा इन्द्रासन छीनना चाहता है।

इन्द्र—भक्तिबल से? इन्द्रासन छीनना चाहता है ? तप-बल से प्राप्त किया हुआ इन्द्रासन-भक्तिबल से छिनजाय।—कुछ समझ में नहीं आता।

दुर्वासा—समझ मे नहीं आने वाली बात तो निःसन्देह है, परन्तु सुरपते, प्रकृति पलट गई है, काल पलट गया है, यह पृथ्वी-आकाश पलट गये हैं, यह चांद-तारे पलट गये हैं यहाँ तक कि परमात्मा भी पलट गया है। तभी तो भक्ति-तप से बढ़ना चाहती है। तभी तो-मेरे शाप से अकाल पीड़ित होकर भी-अयोध्या अभी तक वैसी ही है—

वाण धन्वा से निकलकर, शून्य ही मे रह गया।
शाप जल ठहरा नहीं, पृथ्वी पै गिरकर-बह गया॥

इन्द्र—खोलदीं-मुनिराज, आपने मेरी आँखें खोलदीं। मैं अवश्य अम्बरीष के भक्तिबल को नष्ट करूँगा।

दुर्वासा—जा भेज, भेज, शीघ्र अपनी-जल, अग्नि और पवन आदि शक्तियों को उसकी ओर भेज। यदि इन शक्तियो से भी उसका भक्तिबल नष्ट हो तो-तू स्वयं जाकर किसी युक्ति से विनाश कर। खूब समझ ले देवराज—

मार्ग का कांटा हटाना है तुझे।
बेल उस विष की सुखाना है तुझे॥

भस्म कर देना है तप से भक्ति बल।
आग पानी में लगाना है तुझे॥

इन्द्र--जो आज्ञा। (नैपथ्य की ओर देखकर) ठहर, ठहर विष्णु के पुजारी, ठहर। देखता हूँ कि तू कैसे मेरा इन्द्रासन छीनेगा--

ठहर सकता नहीं यह भक्ति बल-आगे तपोबल के।
बराबर हो नहीं सकता है जुगनू-सूर्य्य मण्डल के॥

(जाना)

दुर्वासा--सुन रुद्रदत्त, मैं अब उग्र तपस्या करने के लिये-हिमालय की चोटी पर जाऊँगा। उस बच्चा ने तो भक्ति बल से विष्णु की सहायता ही प्राप्त की है, पर मैं-तपोबल से स्वयं विष्णु बनने की चेष्टा करूँगा।

रुद्रदत्त--गुरु महाराज, जब आप विष्णु बन जायें, तो मुझे भी अपने विष्णुलोक ही में रखना।

दुर्वासा--तू बड़ा मूर्ख है।

रुद्रदत्त--इसमे मूर्खता की क्या बात है गुरूजी? आप तप करने के लिये हिमालय की चोटी पर जायगे, तो मैं विन्ध्याचल की छाती पर आसन लगाऊँगा।

दुर्वासा--क्यों, किसलिये?

रुद्रदत्त—आप तप करके विष्णु बनेंगे, तो मैं तप करके गरुड़ बनूंगा।

दुर्वासा—तुझे ऐसी ही बेतुकी सूझा करती है, चल तपस्या को देर होती है:—

इस समर को और तपबल चाहिये।
अब कमण्डल मे अधिक जल चाहिये॥
व्यय हुआ जितना भरा था आजतक।
पूर्ण करने को हिमाँचल चाहिये॥

(दोनों का जाना)

भगवान् विष्णु-(आकर) जाओ तपस्वीवर, चाहे जितना उग्र तपस्या करने जाओ, परन्तु जब तक तुम्हारे भीतर क्रोध की भीषण ज्वाला भड़कती रहेगी-तुम्हें सफलता प्राप्त नहीं होगी।

गाना

—*—

जगत में क्रोध वड़ा वैताल।
ताल ठोंक कर--वड़ों वड़ों को-
पहुँचाता पाताल।
जगत में क्रोध वड़ा वैताल।

ईश्वर भक्ति

हृदय कुण्ड में क्रोध की--
जभी धधकती आग।
स्वाहा होते हैं तभी-
ज्ञान, ध्यान, वैराग।
तपकी ज्वाला भी बुझ जाती-
जब जलती यह ज्वाल।
जगत में क्रोध बड़ा वैताल।
जैसे तरुवर के लिए-
दिन दिन दीपक खाय।
वैसे ही नर-देह को-
देता क्रोध सुखाय।
बलवानों को निर्बल करता-
क्षण में यह चण्डाल।
जगत में क्रोध बड़ा वैताल।
(जा॰

—❀❀—

आठवाँ सीन

स्थान—अम्बरीष का ध्यान मन्दिर।

(अम्बरीष ध्यान-मग्न हैं, वरुण आते है)

वरुण—(स्वगत) यही तो वह भक्ति का पक्षपाती अम्बरीष है ? वरुण, देवराज इन्द्र की आज्ञानुसार-प्रलय की वर्षा करके इसके अखण्ड ध्यान को भङ्ग कर।

(वर्षा होती है, अम्बरीष ध्यान मग्न ही रहते हैं)

वायु—(प्रवेश करके) वरुणदेव, तुम्हारी शक्ति निष्फल हो गई, तुम जाओ। यह-पवन अब अपने प्रचण्ड झोकों से इसकी भक्ति डिगायेगा।

(वरुण का जाना, पवन के वेग से सारा स्थान हिलता है अम्बरीष फिर भी बैठे रहते हैं)

अग्नि—(प्रवेश करके) तुम भी इस युद्ध में नौसिखिये सिपाही की तरह हार गये। जाओ, अब यह अग्नि अपना बल आजमाता है।

(वायु का जाना। उस स्थान में आग लगना और अम्बरीष का उसी तरह ध्यान में अचल रहना।
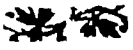
काम—(प्रवेश करके) जाओ-जाओ-अग्निदेव, तुम भी हारे हुओं की पंक्ति में जाओ । यह कामदेव अब अपना काम शुरू करता

(उस स्थान का वसन्तवाटिका के रूप में परिवर्तित होजाना)

चलो-मेनका, उर्वशी, रम्भा, तिलोत्तमा आदि । इस भक्ति के दीवाने को-अपने तीर कमान से बांध डालो ।

(काम का छुपना । अप्सराओं का आकर नाचना

गायन

—*—
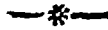
दिवाने, नैन ज़रा उघार, छोड़ यह माला का मनका ।
जवानी आनी है फिर नहीं, उठाले सुख मानुष तन का ॥
रिमझिम बदरा बरस रहे हों, चमचम बिजली चमकरहीहो।
सोने के सुन्दर प्याले में, मनहर मदिरा छलक रही हो ॥
खुली अटारी की खिड़की से, पवन सुगन्धित टकराती हो।
आमों की शाखाओं पर से, कोयल कूकू चिल्लाती हो ॥
साथ में रमणी हो उस समय, तभी आनन्द है जीवन का।
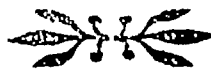
(अप्सराओं का जाना । अम्बरीष का उसी तरह ध्यान मग्न रहना । काम का फिर प्रवेश करना)

काम—हैं! काम! तेरे भी बाण व्यर्थ होगये?

[ब्राह्मण के वेष में इन्द्र का प्रवेश]

इन्द्र—हाँ, होगये। जगज्जयी मदनदेव! तुम भी इस अखाड़े मे चित्त होगये। तुम्हे भी पछड़े हुओ की टोली में जाना चाहिये। मै स्वयं इसे परास्त करता हूं.—

[काम के जाने के बाद-ऊंचे स्वरों मे-]

जय नारायण, जय पुरुषोत्तम, सर्वोत्तम श्रीमन्त हरे।
जय असुरारी, जय अविकारी, अमर अनादि अनन्त हरे॥
जय पृथ्वीपति, जय जगतपति, जगपति कमला कान्त हरे।
जय भवमोचन, भक्तो के धन, भयभञ्जन, भगवन्त हरे॥

अम्बरीष—(समाधि से उठकर) कौन? कौन मेरे भगवान के नामामृत की वर्षा कर रहा है?

इन्द्र—मै- एक ब्राह्मण,-आपसे कुछ दान मांगने आया हूँ। मैंने सुना है कि भक्त होने के साथ साथ आप दानी भी बहुत बड़े हैं।

अम्बरी—बड़ा नाम तो भगवान् का है, पर हाँ अपनी शक्ति के अनुसार मै आपकी सेवा करने को तैयार हूं। आज्ञा कीजिये।

इन्द्र-वचन दीजिये कि ब्राह्मण जो दान माँगेगा वही आप देगे

अम्बरीष—नि:सन्देह-आपने हरिनाम का उच्चारण करके मेरे हृदय को वड़ा आनन्द पहुचाया है। मांगिये दूंगा। क्या चाहते हैं ?

इन्द्र—अवश्य दीजियेगा ?

अम्वरीष—हां-अवश्य दूंगा।

इन्द्र—तो मैं यह मॉगता हूॅ कि आप अपना सत्य मुझे दे दीजिये।

अम्वरीष—है ! यह आपने क्या मॉगा !

इन्द्र—वस, आपको देना हो तो यही दीजिये, नही तो यह ब्राह्मण वापिस जाता है। आपने जब मुझे वचन दिया तब मैंने दान मांगा। अव क्या अपने वचन से फिर जाओगे राजकुमार ?

अम्वरीष-नहीं, अपने भगवान् का यह तुच्छ दास-अपने वचन से कभी नही फिरेगा। लीजिये, मैंने अपना सत्य आपको दिया।

(अम्बरीष के शरीर मे से सत्य निकल कर इन्द्र के पास खडा होजाता है)

है— तुम कौन हो ?

सत्य—मैं सत्य हूॅ। आपने जब मेरा दान करके-इस ब्राह्मण को दे दिया, तो मै आपके शरीर से अलग होकर इसके पास आगया।

अम्बरीष—है ! मैंने तुम्हारा दान करके इस ब्राह्मण को दे दिया ? नहीं, नहीं मैंने ऐसा कभी नहीं किया है।

(धर्म का अम्बरीष के शरीर से निकल कर सत्य के पास खडे होजाना)

हैं ! तुम क्यो इस शरीर से निकल कर उधर पहुंच गये ? तुम्हारा नाम क्या है ?

धर्म—अम्बरीष, मै धर्म हूँ। जब सत्य तुम्हारे पास नही रहा-तो मैं कैसे रह सकता था। जहॉ सत्य है वहीं धर्म है। इसीलिये यह धर्म तुम्हे छोड़कर-सत्य के पास आगया।

अम्बरीष—हाहाहाहा,धूर्त्तों ! तुमने बुरी तरह मुझे अपने चंगुल मे फँसा रक्खा था।

(भक्ति का अम्बरीष के शरीर से निकल कर सत्य और धर्म के पास खडे होजाना)

है ! देवी, कल्याणी, सुख दायनी, जाने के पहले तुम भी अपना परिचय दो।

भक्ति—मैं भक्ति हूं। जब सत्य तेरे पास नहीं रहा, धर्म तेरे पास नहीं रहा, तो मै कब ठहर सकती थी ? जहॉ सत्य है, जहां धर्म है, वहीं तो भक्ति और भगवान् हैं ?

अम्बरीष—तो मै भगवान् को भी नहीं चाहता। ओह ! सर चकरा रहा है ! देह गिरी जारही है। पद्मे ! पद्मे !!

(मूर्च्छित होजाता। पद्मा आती)

पद्मा-स्वामी, स्वामी, (सत्य आदि को खड़ा देख कर) तुम चारो कौन हो ? यह मूर्च्छित कौन पड़ा है ? (पहचान कर) हैं ! पतिदेव ! पतिदेव !! उठिये, जागिये, आँखें खोलकर अपना दासी की ओर देखिये:—

तुम्हीं को अपने जीवन मे जो मैंने प्रान समझा हो।
वचन से, कर्म से, मन से, सदा भगवान् समझा हो॥
तो मेरे सत का, पतिव्रत का, जग मे बोल बाला हो।
तुम्हारी मूर्च्छा जाये, अन्धेरे मे उजाला हो॥

अम्बरीष (जागकर) कौन ? पद्मा ?

पद्मा-नाथ, आपकी यह कैसी अवस्था हो गई ?

अम्बरीष—इस ब्राह्मण ने मुझ से सत्य का दान माँगा, मैंने देदिया। जिसके कारण मेरे शरीर से सत्य, धर्म और भक्ति तीनो बारी बारी से निकल गये।

पद्मा—क्यों ब्राह्मण, तूने ब्राह्मण होकर यह क्या किया ?

इन्द्र—जो किया-ठीक किया। मै इन तीनों को अपने साथ लिये जाता हूँ। दान मे प्राप्त हुई सम्पत्ति पर मेरा पूर्ण अधिकार है।

पद्मा—नहीं तेरा पूर्ण अधिकार नही है।

इन्द्र—यह क्यो ?

पद्मा-यह यो कि यह दान, दान ही नहीं है।

इन्द्र—है ! दान ही नही है !

पद्मा-हाँ दान ही नही है। पुरुप जब कोई चाज दान करता है तो-उस दान के समय अपनी स्त्री को भी शरीक कर लेता है। स्त्री पुरुप की अर्द्धाङ्गिनी है। शास्त्र की आज्ञा है कि विना अर्द्धाङ्गिनी के जो दान किया जाता है। वह दान, दान ही नही कहलाता है। ब्राह्मण, तू ब्राह्मण नहीं है। ब्राह्मण कदापि ऐसा दान नही माँग सकता। तूने मेरे भोले स्वामी को भरमाया है। बोल, बोल, कौन है ? नहीं तो, अभी अपने पतिव्रत के तेज से तुझे भस्म करती हूँ।

(इन्द्र का काँपना । भगवान विष्णु का प्रगट होना)

भगवान् विष्णु—ठहरो, सती ठहरो। यह ब्राह्मण, ब्राह्मण नहीं है, इन्द्र है।

अम्बरीप-हैं ! इन्द्र है ?

भगवान विष्णु-हाँ-इन्द्र है। अब देखो।

(भगवान विष्णु अपनी शक्ति से इन्द्र का नकली वेप हर लेते है, उसी समय इन्द्र, इन्द्र के रूप मे दिखाई देता है)

अम्बरीप-जय जय त्रिलोकी नाथ भगवान् की जय।

भगवान् विष्णु—परन्तु इस घटना से तुम्हारा कुछ नहीं बिगड़ा, तुम में सत्य धर्म और भक्ति का अंश अब दूना होगया।

अब तुम इस इन्द्र को क्षमा करदो-कारण कि यह तो तपस्वी दुर्वासा के रचाये हुए नाटक का एक पात्र है।

अम्बरीष-तो इस समय तपस्वी दुर्वासा कहाँ हैं ?

भगवान् विष्णु-हिमालय पर । तुम्हें परास्त करने के लिये और भी उग्र तप कर रहे हैं। उधर देखो।

(दुर्वासा का उग्र तपस्या में दिखलाई देना)

ड्रापसीन

पहिला सीन

स्थान-महल ।

—❀—

मणिकान्त की स्त्री उमा उदास खड़ी हुई है। उसके चारों ओर उसकी सखियां खड़ी हुई हैं

—❀❀❀—

पहली सखी—एक बात पूछूं छोटी बहू रानी ?

उमा—पूछो ।

पहली सखी-छोटे कुमार की पत्नी होकर भी-तुम उदास क्यों रहा करती हो ?

दूसरी सखी-हाँ-जोवनवसन्त में यह गुलाब की कली खुलने और खिलने की अपेक्षा मुरझाई हुई क्यो रहती है ?

उमा-क्या मैं तुम सबके साथ खेलती नहीं ?

पहली सखी-खेलती हो पर कठपुतली की तरह ।

उमा—हँसती नहीं ?

पहली सखी-हँसती हो, पर उषाकाल की तरावली की तरह ।

उमा-बोलती नहीं ?

पहली सखी-बोलती हो, पर टूटे हुए तारो वाली वीणा की तरह ।

उमा-गाती नही ?

पहली सखी-गाती हो, पर-शिशिर ऋतु की सताई हुई कोयल की तरह ।

दूसरी सखी—जरा इधर देखो सखी ।

उमा-क्या है ?

दूसरी सखी-इसका उत्तर तुम्हारे नेत्रा में है:—

इन अमल कमल से नयनो मे पानी क्यो भर भर आता है ?
पल पल मे-इन पलको मे क्यो काजल का जल बन जाता है ?

तीसरी सखी-बतादो, हमे अपनी समझती हो-तो अपने हृदय की बात बतादो ।

उमा-हृदय की बात ?-मत पूछो,-एक छोटी सी पहाड़ी नदी के प्रबल वेग को कैसे रोक सकती है ?

पहली सखी-देखा न मैं जो कहती थी कि ये चिन्तित हैं ।

दूसरी-(हाथ पकड़ कर) कह डालो, कह डालो, राजकुमार मणिकान्त की अर्द्धाङ्गिनी उमादेवी, तुम्हे उन्ही की सौगन्द है अपने मन की कह डालो ।

उमा-मनकी ? सुने बिना न रहोगी ?

दूसरी सखी-हां, सुने बिना न रहेगी ।

उमा—तो मैं आजकल यह सोचा करती हूँ कि अपने बड़े भाई के होते हुए-मेरे पतिदेव राज्य क्यों चाहते हैं, क्या उनके बड़े भाई राज्य के योग्य नहीं हैं?

पहली सखी—प्यारी उमा, महत्वाकाक्षा तो जीवमात्र में जन्म से हुआ करती है। वही तुम्हारे पति मणिकान्त मे है ता अनुचित ही क्या है?

उमा—मैं मानती हूँ कि महत्वाकाँक्षा-अर्थात् उन्नति की इच्छा बुरी नहीं, पर वह धर्म रखकर हो तब? धर्म रखकर न हो तो—बुरी है।

पहला सखी—तो क्या तुम्हारे पतिदेव अधर्म को राह पर हैं?

उमा—यह मै कैसे कहदूं! हृदय की बात मुँह पर नहीं आसकती। हायरी आर्यजाति! हायरे नारी धर्म!

पहला सखी—नहीं-मै तो कहूंगी कि यदि तुम्हारे पतिदेव अधर्म पर हैं तो तुम उनसे संकोच छोड़ कर कह दो-मुंह खोल कर कहदो।

उमा—यहा तो सोच रही हूं कि संकोच छोड़ूं या नहीं? मुंह खोलकर कहूं या नहीं? संकोच छोड़कर-मुंह खोलकर जब कहूँगा तो-उन्हीं के सामने क्या, सारे देश के सामने कहूँगी। इस समय तो-सोच रही हूं।

पहली सखी—क्या?

उमा—यही कि नारी धर्म क्या है ? हाय ! नारी धर्म का व्याख्या भी तो बड़ी कठिन है:—

गाना

—o—

जगत में नारी—धर्म्म महान ।
नारी ने-प्रह्लाद भक्त सी, दी जगको सन्तान ।
जगत में नारी—धर्म्म महान ।
अपने तन और मनका नारी रखती कभी न ध्यान ।
पति के तन में, पति के मन में, होती है बलिदान ॥
जगत में नारी—धर्म महान ।
नारी दल जिस देश में होता सच्चरित्र गुणवान ।
उसी देश को जगमें मिलता सब से उच्च स्थान ।
जगत में नारी—धर्म महान ॥

(सब का जाना)

स्थान--रास्ता

मणिकान्त—(प्रवेश करके) है, कोई शक्ति है, निःसन्देह कोई शक्ति है, कोठार भर जाने की बात से मानना पड़ता है कि कोई शक्ति अवश्य है। यदि उसी शक्ति का नाम ईश्वर है, तो मैं उस ईश्वर को अब मानने लगा हूं।

घण्टाकरण—(प्रवेश करके) ऊँहूं हूं हूं-किसे मानने लगे हो?

मणिकान्त—जिसे मानना चाहिये। आज से तुम अपने यह कानो के घंटे उतार डालो घण्टाकरण!

घण्टाकरण—क्यों ?

मणिकान्त—यो कि तुम्हारा मित्र मणिकान्त अब उस शक्ति को मानने लगा है, जिसे लोग इश्वर कहते हैं।

घण्टाकरण—ऊँहूंहूंहूं-तुमने सब चापट कर दिया राजकुमार मैं तो तुम्हे राजा बनाने जारहा था-पर तुमने तो बाच ही में लुटिया डुबोदी, सुबह के पहले ही बेसुरी भरवा छोड़दी।

मणिकान्त—वो राजा बनाने की इच्छा मैंने कब छोड़ा है? मैंने तो नास्तिकता छोड़ी है और ईश्वर को मान लिया है।]

घण्टाकरण—ऊँहूंहूंहूं, उसका नाम मत लो, उसका नाम लेना-नेक काम मे बदशुगूनी पैदा करना है। मैं तो समझता हूं कि-जिस तरह छींक आजाने पर मुहूर्त बिगड़ जाता है, उसी तरह किसी काम के पहले-वह मनहूस नाम लेने से-उस काम का सत्यानाश होजाता है।

मणिकान्त—अच्छा तो उस कोठार के भीतर क्या था?

घण्टाकरण—क्या था? किसी बाजीगर के पिटारे मे से निकल आने वाला एक आम का पेड़ था। ढिठबन्धी और जादू को तुमने एक खास शक्ति समझलिया? बस, इतने ही मे मान लिया? तुम बड़े भोले हो राजकुमार—

पर्वत का टीला-जादू से-जलका सोता बन जाता है।
कामरू कमच्छा मे-मनुष्य, मैना तोता बन जाता है॥

मणिकान्त—शायद तुम्हारा ही कहना ठीक हो।

घण्टाकरण—हां-मेरा ही कहना ठीक है। यह बातें छोड़ दो और सामने देखो, कुछ नगरवासी आरहे हैं। इन्हे पटाओ कि यह सब तुम्हारे लिये राय दें।

(चार नगरवासियों का आना)

घण्टाकरण—आओ भाइयो, आओ, इधर आजाओ, देखो-अब तो तुमने खूब सोच समझ लिया होगा। राय तुम्हें अपने इन छोटे राजकुमार ही के हक़ मे देनी होगी।

पहला नगरवासी—रहने दे, रहने दे, चापलूस चालाक, चोट्टे, चटोरे, अब तेरी दलाली की जरूरत नहीं है। हमारी पीठें ही हमसे कह रही हैं कि हम इन छोटे राजकुमार के लिये राय दें।

घण्टाकरण—इसका मतलब ?

पहला नगरवासी—इसका मतलब—(कुरता फाड़कर) इधर देख। इस पेट के ऊपर कोड़ो की मार के उभरे हुये अक्षरा मे लिखा हुआ है। पढ़ और समझ।

घण्टाकरण—हैं !

पहला नगरवासी—हां! हम अकाल के मारे हुये दीन हीन प्रजागण-कोठार से एक मुट्ठी अन्न मांगने जायें और तेरा यह राजकुमार-अन्नदान के बदले-कोड़े मारने की भीख से हमारे पेटों को भरे, और फिर हमसे ही राय माँगे।—

धिक्कार हमे फिर जो चलें राह पाप की।
पिटते भी जाँय और कहे-"जय भी आपका"॥

घण्टाकरण—तुम झूँठ बोल रहे हो। यह-और किसी के कोड़े मारें ? यह तो बडे दयालु पुरुष हैं। इनका आत्मा तो बड़ी दयावान् आत्मा है। मैंने तो यह बात अब तक नहीं सुनी कि इन्होंने किसी के कोड़े मारे।

पहला नगरवासी—तू क्यों ऐसी बात सुनता । तू तो उस दिन अपने घर में बैठा बैठा, इनके दिये हुए कलदारों को गिन रहा था ।

दूसरा नगरवासी—वाहरे हमारे दयावान् राजा के न्याय-मूर्ति मन्त्री, क्या कहना है ?—

मारने का भी ढँग निराला है ।
हमने कब मारा, मरगये होंगे ॥

घण्टाकरण—हैं ! यह सब है क्या ! (मणिकान्त से) राजकुमार, क्या इनका कहना सच है ? सुना तो मैंने भी था—पर विश्वास नहीं किया था । क्या तुमने कोड़ो से इन्हें पीटा था ?

मणिकान्त—हाँ, हाँ, मैंने इन्हे कोड़ों से पीटा था । यह लोग पिटने ही के योग्य हैं ।

घण्टाकरण—(धीरे से) सब स्वाहा कर दिया । एक ही चिनगारी से सारा बना बनाया किला फूंक डाला । सच है—नादान की दोस्ती जी का जंजाल ही होती है ।

पहला नगरवासी—(मणिकान्त से) क्यो ? हमसे रायमाँगने वाले दयालु राजकुमार, अब भी सेना को बुलवाओ न ?

मणिकान्त—अरे तो क्या तुम यह चाहते हो कि मैं तुम से कोड़े मारने की क्षमा माँगूं । ऊँ हूं-चाहे तुम मेरे हक मे राय दो या न दो, पर मैं तुम से क्षमा नहीं माँग सकता ।

घण्टाकरण—(मणिकान्त से)अजो माँग भी लो यह नगर वासी तो आपके बालबच्चे हैं, अपने बालबच्चो से क्षमा माँगनेमे बड़ोका अपमान नही होता।(चुपके से)यह वक्त ऐंठने का नहा है।

मणिकान्त—(धीरे से)ऐसा है-तो माँग लूंगा, क्षमा भा मांग लूंगा।

पहला नगरवासो—हां-आज तो राय लेनी है न ? आज मुंह से क्षमा माँगना क्या, अपने सिर का टोपी भी हमारे पैरों पर रख दोगे।

मणिकान्त—यह बात नही।

पहला नगरवासो—यह बात नहा है तो क्या बात है।

घण्टाकरण—बात यह है कि-

मणिकान्त—नहीं, बात यह है कि-

घण्टाकरण—(मणिकान्त से) अब या तो तुम्हीं बोल लो या मुझे ही बोलने दो। (नगरवासियों से) बात यह है कि-यह अपनी प्यारी प्रजा के कोड़े मारें-ऐसा कभो हो ही नहा सकता। यह तो उस चालाक अम्बरीष की चालाको है। उसने इनसे कहा-कोठार का नाज बचा लेना, चाहे भूखी प्रजा पर कोड़े हा क्यों न फटकारने पड़ें, इस घिस्से से उसने इन्हे तो बुरा बना दिया खुद कोठार लुटाकर भला बनगया।

पहला नगरवासी—चुप चुप किराये के टट्टू अम्बराष को दोषी ठहराता है ! कहीं गुलाब में भा दुर्गन्धि हो सकतो है ? गंगाजल मे भो अशुद्धता आ सकतो है ?

घण्टाकरण—अरे ब्राह्मण ! ओ ब्राह्मण ! तू हमारे काम में क्यो बाधा डालता है ? कहीं अम्बराष से कुछ कलदार तो नहीं ले लिये जो इस तरह उसकी तारीफ़ के पुल बाँध रहा है ?

पहला नगरवासी—खबरदार, जो फिर ऐसी बात कही मैं उन ब्राह्मणो मे नहीं हूं, जो अपने पेट की खातिर देश का नाश करादे। सच तो यह है कि मैं ऐसे नास्तिक को राजा बनने ही नहीं दूंगा।

मणिकान्त—अरे अब मैं नास्तिक नही हूँ, ईश्वर कोमानने लगा हूँ।

घण्टाकरण—ऊंहूँहूँ।

मणिकान्तअरे ऐसे समयतो अपनी ऊंहूँहूं रहनेदियाकर।

घण्टाकरण-अच्छा अब की दफा सिर नहीं हिलाऊंगा।

पहला नगरवासी—तुम्हारा आज यह कहना कि-मैं ईश्वर को मानने लगा हूं-प्रजा को धोखा देने के सिवाय और कुछ नहीं है।

मणिकान्त—नहीं भाई, मेरी बात का ईश्वर ही साक्षी है।

घण्टाकरण—ऊंहूँहूँ।

मणिकान्त—हैं फिर वही !

घण्टाकरण—अरे क्या सिर हिलगया ? इस बार तो मैंने सिर नहीं हिलाया था, आदत पड़ जाने की वजह से ऐसा हो गया होगा।

दूसरा नगरवासी—सुनो मणिकान्त, तुम राजा हो ही नहीं सकते। राजा वह हो सकता है जिसमें इतने गुण हो।

दया हो, न्याय हो गम्भीरता हो।
सरलता मुख पै मन मे वीरता हो॥
कभी जिसका नहीं औदार्य कम हो।
प्रजा को पालता सन्तान सम हो॥

घण्टाकरण—अरे, यह गुण इन्हीं मे हैं, देखना ये ही राजा होंगे।

(चारों नगर वासियों का जाना)

मणिकान्त—अरे मैं राजा होऊंगा, होऊंगा होऊंगा।

घण्टाकरण—शाबाश। बढ़े रहो। अब आये राह पर। यही हौसला तो कामयाबी दिलायेगा। अच्छा सुनो, मेरी मानोगे ?

मणिकान्त—मानूंगा अवश्य मानूंगा।

घण्टाकरण—तो तुम अभी अम्बरीष के पास जाओ और उससे इस बात का वचन लो कि-प्रजा की राय उसके पक्ष में आने पर भी वह तुम्हारे लिये राज छोड़ दे। मै समझता हूँ कि वह भोला भगत-बड़ी उदारता से तुम्हें यह वचन देदेगा।

मणिकान्त—वाह घण्टाकरण, तुमबड़े चतुर हो।

घण्टाकरण—चतुराई तो कलदार सिखाता है । जाओ पचास हजार की थैलियाँ मेरे घर पहुंचादो ।

मणिकान्त—पचास हजार नहीं एक लाख । मगर जैसे मैने तुम्हारी एक बात मानी है, वैसे ही तुम्हे भी मेरी एक बात माननी पड़ेगी ।

घण्टाकरण—वह क्या ?

मणिकान्त—तुम नगर मे कुछ स्त्रियो की सहायता से एक 'महिलासभा' कराओ । पुरुषो की राय यदि मेरे लिये नहीं मिले तो स्त्रियो को राय दिलाओ ।

घण्टाकरण—अच्छी बात है । मगर उस महिलासभा की सभानेत्री कौन होगी ?

मणिकान्त—सभानेत्री ? जब तुमने मेरा हाथ पकड़ा है तो यह भी करना ही पड़ेगा । स्वयं तुम्हें ही सभानेत्री बनकर वहाँ जाना पड़ेगा ।

घण्टाकरण—यह क्या कहने लगे राजकुमार ? आप मुझे पुरुष से स्त्री बनाना चाहते हैं ?

मणिकान्त—थोड़ी सी देर के लिये । एक प्रभावशाली व्याख्यान दे देने तक के लिये ।

घण्टाकरण—ऐसा करने से मेरा चरित्र गिर जायगा ।

मणिकान्त—दो लाख दूंगा ।

घण्टाकरण—कहीं भेद खुल गया तो मेरा मान जाता रहेगा !

मणिकान्त—तीन लाख दूंगा ।

घण्टाकरण—हृदय भी तो रोकता है ।

मणिकान्त—चार लाख दूंगा ।

घण्टाकरण—कम है !

मणिकान्त—पाँच लाख दूंगा ।

घण्टाकरण—अच्छा स्वीकार है राजकुमार । मित्र की खातिर-मित्र को यह भी स्वीकार है ।

मणिकान्त—तो बेड़ा पार हैः—

हजारों पै नहीं, लाखो पै जब सौदा सकारा है ।
अगर थैली में बरकत है, तो सिंहासन हमारा है ॥

(जाना)

घण्टाकरण—

पाँच लाख की थैली आये तो फिर तज सब सोच विचारम् ।
भजकलदारम्, भजकलदारम्, भजकलदारम्, दिलदारम् ॥

लीला—(प्रवेश कर) जाओ जाओ, पाँच लाख की थैली पर अपनी आत्मा को बेचने लिये-लीला के नाथ जाओ । परन्तु लीला-तुम्हारी उस स्त्री लीला को रंगभूमि पर पहुंचकर-ऐसी

लीला दिखायेगी कि सभानेत्री भी अपने भाव भूल जायेगा और सभा भी लजा जायगी:—

लिये जितने हैं तोड़े तुमने उनका तोड़ कर दूंगी।
जो तुमने जोड़ जोड़ा है उसे बेजोड़ कर दूंगी॥
तुम्हारा लोभ बहकाने चला है आज नारी को?
मैं ऐसे लोभ का पल भर मे भॉडाफोड़ कर दूंगी॥

गाना

होने न दूंगी. होने न दूंगी, मैं यह बात, मैं यह बात,
वे रहेंगे डार डार, मैं रहूंगी पात. पात,
देख सकते न नैन के बान,
नारियों का ऐसा अपमान।
चढ़ी हैं अब तो भौंह कमान.
करेगी पल में सर मैदान।
है जहां पहल की रात, सत्य का वहां करूंगी प्रभात,
(जाना)
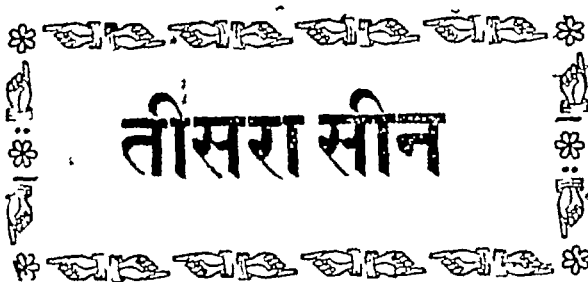
तीसरा सीन

स्थान—अम्बरीष का पूजा मन्दिर

—०—

(अम्बरीष रेशम की डोरी हाथ में लिये ठाकुरजी को झूला झुला रहा है)
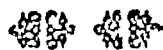
गायन

जगत को जो उठाये है, उठाता है उसे झूला।
झुलाता है जो दुनियां को, झुलाता है उसे झूला॥
नहीं झूला है फूलों का, ये बन्धन भक्तजन का है।
प्रकृति को जो खिलाता है, खिलाता है उसे झूला॥
वही भीतर है आंखों के, वही बाहर है आंखों के।
कभी भीतर, कभी बाहर, नचाता है उसे झूला॥

—०—

मणिकान्त—(प्रवेश करके) भाई साहब।

अम्बरीष—आओ मणिकान्त, आओ।

मणिकान्त—आज मैं आपको एक शुभ समाचार सुनाता हूं।

अम्बरीष—सुनाओ।

मणिकान्त—अब मै आस्तिक होगया हूँ।

अम्बरीष—आस्तिक होगये हो? अहाहाहा! तुम्हे बधाई मुझे बधाई, आओ-मेरे पास बैठ जाओ और यह डोरी खेंचकर मेरे-अपने और सारे संसार के महाप्रभु को भूला भुलाओ।

मणिकान्त—भूला भुलाऊँ? किसे?-इसे मेरी आस्तिकता इतनी सकुचित नहीं है। ईश्वर को जुरूर मानने लगा हूं, पर पीतल के खिलौने को ईश्वर मानने के लिये तैयार नहीं हूँ।

अम्बरीष—खिलौना? भगवान की मूर्ति को खिलौना कह रहे हो?—

नहीं पूरे हुए हो तुम, अभी आधे हो पौने हो।
खिलौना यह नहींहै, मैं खिलौना, तुम खिलौनेहो॥

मणिकान्त—अजी, दुनियाँ जिस तरह से ईश्वर की पूजा किया करती है वह ईश्वर का पूजा नहीं है, वह तो तत्त्वों की पूजा है।

अम्बरीष—तत्त्वों की पूजा किस तरह है?

मणिकान्त—इस तरह कि-तत्त्व पाँच हैं, पृथ्वी, जल, अग्नि वायु और आकाश। इन में से पहाड़, दीवार वृत्त, चौराहे, और पाषाण पीपल आदि की मूर्तियों की पूजा-पृथ्वी तत्त्व की पूजा है।

अम्बरीष—और जलतत्त्व की पूजा ?

मणिकान्त—समुद्र, मेघ, कूप और गंगा आदि नदियाँ हैं।

अम्बरीष—अग्नि का ?

मणिकान्त—अग्नि का ? हवन, पंचाग्नि, ज्वालामुखी, बिजली और सूर्य चन्द्रादि नवग्रह हैं।

अम्बरीष—वायु की ?

मणिकान्त—वायु का ? प्राणायाम तथा भूत, प्रेत आदि हैं।

अम्बरीष—और आकाश का ?

मणिकान्त—आकाश की ? प्रार्थना तथा शब्दों द्वारा स्तुति है।

अम्बरीष—तुम अपनी कह चुके मणिकान्त, अब मेरी सुनो। मैं पूछता हूँ कि इन तत्त्वों में शक्ति किसको है ?

मणिकान्त—शक्ति ? शक्ति तो ईश्वर ही की है।

अम्बरीष—तो बस-दुनियाँ तत्त्वों को नहीं पूजती, ईश्वर ही को पूजती है। बिना आधार के उस निरंजन निराकार की पूजा हो ही नहीं सकती—
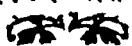
कही पृथ्वी, गगन और वायु, ज्वाला, जल मे पुजता है।
कहीं भक्तो के, भावुकजन के, अन्तस्तल में पुजता है॥
कही ब्रह्मा की वाणी मे, कही शिव की जटाओ मे।
मेरा भगवान् ही तो पुज रहा है, सब दिशाओ मे॥

मणिकान्त—मैं यह मानने के लिये तैयार नही हूं।

अम्बरीष—(उङ्गली की अँगूठी दिखाकर) अच्छा इधर देखो यह क्या है ?

मणिकान्त—अँगूठी।

अम्बरीष—अँगूठी या सोना ?

मणिकान्त—हाँ सोना भी है।

अम्बरीष—तो इसी तरह यह पीतल की मूर्ति, पीतल की मूर्ति भी है और भगवान् की मूर्ति भी। अँगूठी की दृष्टि वाले इसे पीतल की मूर्ति कहेगे और सोने की दृष्टि वाले भगवान् की। देखो-पृथ्वी के नीचे सर्वत्र जल ही जल है परन्तु-उसकी प्राप्ति के लिये--किसी एक स्थान पर कुआँ खोदना ही पड़ता है। इसी प्रकार उस सर्वव्यापक तक पहुंचने के लिये-कोई न कोई इष्ट या आधार रखना ही पड़ता है, यही मूर्ति-पूजा का रहस्यहै।

मणिकान्त—मै तो प्रत्यक्ष देखूं तो मानूं।

अम्बरीष----इनकी कृपा होगी तो यह भी हो जायेगा--

वनाया आस्तिक तुम को तो अपना भी वनायेंगे।
इसी पीतलकी प्रतिमामें झलक अपनी दिखायेंगे॥

करेंगे मुक्त पल भर में अभी संशय से, शोकों से।
झुलाओ तो इन्हे तुम—डोर लेकर-प्रेमझोकों से॥

मणिकान्त—अच्छा, इन्हें प्रेम झोकों से झुलाकर इनकी भी परीक्षा करूँगा, पर इनके पहले-इनके एक भक्त की परीक्षा करता हूं।

अम्बरीष—क्या मेरी?

मणिकान्त—हां, हाँ, तुम्हारी—

अगर भगवान् से अपने अटल अनुराग करते हो।
तो दिखलादो कि इनके नाम पर क्या त्याग करते हो॥
छुड़ाना हो जो मेरी हठ, तो अपने ताज को छोड़ो।
जो त्यागी हो, तो मेरे वास्ते तुम राज को छोड़ो॥

अम्वरीष—राज? मैं तो राज किसी दिन भी नहीं चाहता था। मेरी इस इच्छा को मेरे पिताजी भी जानते है—और मेरे भगवान् भी जानते हैं।

मणिकान्त—यदि ऐसा है तो—आज भी अपने भगवान् ही के सामने फिर स्पष्ट कर दीजिये। कहदीजिये कि—प्रजा से राज मिलने पर भी—मैं मणिकान्त को राज देदूंगा;

अम्बरीष—हां, मैं अपने भगवान् के सामने वचन देता हूं-प्रतिज्ञा करता हूं कि—

पद्मा—(आकर) ठहरिये—

पराई वस्तु का उपयोग ऐसा कर नहीं सकते ।
प्रतिज्ञा हो नहीं सकती, प्रतिज्ञाकर नहीं सकते ॥

मणिकान्त—हैं। पराई वस्तु ? कैसी पराई वतु ? प्रजा ने इन्हें जब राज देदिया तो इन्हे अधिकार है कि उस राज यह चाहे जिसे दे डालें ।

पद्मा—नहीं, यह अधिकार इन्हे नहीं है। न अब है, उस समय होगा:—

जिसे तुम राज कहते हो, रिआया की वह थाती है।
रिआया अपनी रक्षा को, इन्हें राजा बनाती है ॥
इन्हे अधिकार ही क्या है, धरोहर की सखावत का।
वचन तुम इनसे लेते हो, अमानत की खयानत का ॥

अम्बरीष—रहने दे पद्मा, रहने दे, त्रिभुवनपति के दरब में, क्यो एक तुच्छ राज के लिये झगड़ा करती है ?

पद्मा—राज के लिये झगड़ा ? मैं कब करती हूँ। मुझे राज से उतना ही वैराग है, जितना कि आपको है। आप राजा यदि यह त्रिभुवननाथ हैं, तो मेरे राजा आप हैं। मैं प्रजा के हित के लिये झगड़ने आई हूँ।

प्रजा को कष्ट हो यह देख सकतीं ही नहीं आँखे ।
जहाँ आंखे प्रजा की हैं, लगी हैं यह वहीं आँखें ॥
अयोध्यानाथ ने आँखें अगर फेरीं अयोध्या से ।
नई सरयू बहा डालेंगी रो रोकर यही आँखें ॥

सुकेशी—(आकर) तो बहने दो। आंसुओं की सर बहने दो । आँसुओ ही की नही, जरूरत पड़े तो खून की भ

एक नई सरयू बहने दो। चल मणिकान्त, क्षत्री होकर राज की भीक माँगने आया है ? सुकेशी का पुत्र होकर, अम्बरीष के आगे हाथ फैलाने आया है ? अगर तू मेरा बेटा है तो अम्बरीष के राजा होते ही, खून ही की एक नई सरयू बहा देना:-

अगर बल है भुजाओ मे, अगर ताकत है पाओ में।
तुझे मैं ताज पहनाऊंगी, तलवारों की छाओ मे॥

पद्मा—माताजी, आप यह क्या कह रहीं हैं ?

सुकेशी—चुप लड़की। दो मर्दों के बीच मे मुंह खोलते लजाती नहीं ? बहू होकर-राज के काज में-पुरुषों की तरह-बोलते शरमाता नहीं ? सुनले, और कान खोलकर सुन ले, तेरे पति के राजा होते ही-अयोध्या नगर, खून की सरयू ही नहीं, खून का एक महा सागर बन जायगा।

उमा—(आकर) तो मै उस खून के महासागर को-क्षीर सागर बना दूंगी।

अम्बरीष-कौन ?-उमा ? मणिकान्त की पत्नी उमा ?

सुकेशी—मेरी पतोहू उमा ? पर्दा हटाकर ? लज्जा छोड़कर ? इस जगह-इस समय।

उमा—हाँ, इस जगह, इस समय, यह उमा, सास की पति की, जेठ की और सारे देश की लज्जा छोड़कर आई है। किसलिये ? नीति, धर्म, मर्य्यादा और सत्य की रक्षा के लिये:-

सनातन रीति द्वारा, न्याय हम सब का यहीं होगा।
बड़े के सामने-छोटा, कभी राजा नहीं होगा॥

सुकेशी—होगा होगा, और इस तरह होगा कि जब बड़े का अस्तित्व ही इस भूमण्डल पर न रहेगा तो छोटा ही राजा होगा। (मणिकान्त से) मणिकान्त, ले यह कटार और करदे इसी समय अम्बरीष का संहार—

न यह भिखारी ही ताज देगा, न वह रिआया ही ताज देगी।
कटार से तू बनेगा राजा, कटार ही तुझको राज देगी॥

(मणिकान्त कटार लेकर भी सोचता है कि ऐसा करू या न करूं)

उमा—माँजी।

सुकेशी—चल हट।

(धक्का देकर गिरा देती है)

पद्मा—माता जी।

सुकेशी—बस (धक्का देकर गिरा देती है) मणिकान्त, अब क्या देखता है ? खड़ा खड़ा क्या सोचता है ? तू मेरा बेटा है। तूने इन छातियो का दूध पिया है। आज उसका बदला चुका। इसे ठिकाने लगा।

अम्बरीष—हे हरि ! हे प्रभु !!

(मणिकान्त अम्बरीष को मारने जाता है। सुदर्शनचक्र मणिकान्त के सामने आजाता है। अम्बरीष हाथ के इशारे से सुदर्शन को मना करता है कि वह मणिकान्त को हानि न पहुंचाये)

स्थान--एक सार्वजनिक मन्दिर

टैना—(आकर) बाहरी तक्दीर। पूरे आठ महीनो मे एक महीने की तनख्वाह मिली है। हाजिरी बजाओ, हाँ मे हाँ मिलाओ, इसका तो डर नही। गालियाँ खाने मे भी हमसे तावेदार को हुज्जत नही। रोना तो यह है कि जब तनख्वाह माँगने जाओ तो घण्टाकरण शेठ कहते है कि आज नही कल। कल जाओ तो भी कहते हैं--"अरे--मैंने तो कहा था, आज नही कल"। उनका यह कल ही कभी नही आता-रोज कल के पहले आज आजाता है। और यहाँ आज कल की कल मे पिसते पिसते कचूमर निकला जाता है। आज भी बड़ी मुश्किलसे जो तनख्वाह दी है तो इस शर्तपर कि छोकरे से छोकरी बनकर "महिला सभा" का इन्तजाम करू। मैंने भी सोचा कि जब नाटक घरों मे-बड़े बड़े दाढ़ी मूंछ वाले-कलदार के लिये अपनी दाढ़ी मूंछ मुड़ाकर-हिरण्यकशिपु की बहन होलिका तक का रूप बनाने को

तैयार हो जाते हैं- तो श्रीमान् टैना जी-अगर अपने टके सीधे करने के लिये-श्रीमती टैनी जी बनकर 'महिला सभा' में आते हैं तो कुछ शर्म की बात नहीं—

नारी की पदवी तो नर से ऊँची ही दिखलाती है ।
सिल बटनेके सम्बोधनमें, पहले सिलही आती है ॥
खाने मे भी, दाल भात के, दाल प्रथम कहलाती है ।
शिव के कूंडी सोटे मे-कूंडी आगे बढ़ जाती है ॥

(सामने देखकर) यह लो सामने महिला मण्डल भी आ पहुंचा । जाऊँ और सभानेत्री के बैठने के लिये चौकी ले आऊँ ।

(जाना, दो नारियों का आना)

एक नारी-अरे यहाँ तो कोई भी नहीं है !

टैनो—(आकर) है कैसे नहीं, यह स्वयं सेवक-अररर यह स्वयं सेविका-तो हाज़िर है और सभानेत्री की चौकी भ हाज़िर है । वे भी आती ही होगी । यह तो स्त्रियों को सभा है । यहाँ समय की पाबन्दी नहीं घर के काम धन्धों से निबट कर ही तो सब बहनें यहाँ आयेंगी मुझे ही देखो न, रोटी बना के, पति को जिमाके, बालबच्चों को सुला के, तब कहीं घर मे ताला लगा के, आसकी हूँ ।

(दो नारियों का प्रवेश)

पहली—आओ बहन माधुरी, आज तो तुम चाँद को मात कर रहा हो।

दूसरी—पर बहन, पिछड़ के क्यों आई ?

पहली—क्या कहूँ मनोरमा, बहन सुधा देर से निकली, इसलिये मैं भी पिछड़ गई। मेरी और इनकी तो जोड़ी है न।

सुधा—सच्ची बात तो यह है कि (पहली की ओर इशारा करके) समय की पाबन्दी तो बहन सरस्वती से ज्यादा किसी में नहीं है।

माधुरी—हाँ-बुढ़ापा आगया पर अभी तक इनकी चाल-ढाल वैसी ही है।

सरस्वती—रहने दे माधुरी, क्यो आपे से बाहर होरही है, कोई मतवाला भ्रमर, भन भन करता हुआ यहाँ न आजाये।

माधुरी—भ्रमर तो नये खिले हुये सरोज पर जायेगा। उस का यहाँ क्या काम ?

मनोरमा—लो, मर्य्यादा और प्रभा ने भी स्वर्गीय देवियों की तरह दर्शन दिये। (दोनों का आना) आओ बहनों, तुम्हारे दर्शन भी कमला के दर्शन के समान हैं।

मर्य्यादा—सभा प्रारम्भ होने मे अब क्या देर है बहन ?

टैनी—यह देर सवेर की बात मैं बताती हूँ। पुरुषो ने हमें गृहलक्ष्मी क्यों बनाया है, बुरी तरह कारागार में बन्द कर दिया
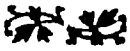
है। मैं तो आज पहला प्रस्ताव यह रक्खूंगी कि यह मरदुये औरतें बनकर कुछ दिनो बच्चे पालने का काम करें तब इन्हें गीले सूखे का हाल मालूम हो। (स्वगत) वक्त टालने के लिए कुछ न कुछ ठोके जा बेटा टैनी, अभी श्रीमती घण्टाकरणी तो आई ही नही हैं।

माधुरी—ठीक है, मैं तुम्हारे इस प्रस्ताव का अनुमोदन करूँगी। अगर हम गृहलक्ष्मी बनती हैं तो पुरुषो को भी तो गृहनारायण बनना चाहिये।

सुधा—अजी बात तो तब है जब पुरुषों से चर्खा चलवाया जाय।

प्रभा—चूल्हा फुंकवाया जाय।

माधुरी—मसाला पिसवाया जाय।

मनोरमा—चौका लगवाया जाय।

टैनी—और ?

घण्टाकरण—(आशा और विद्या के साथ आकर) और मर्द से औरत बनाया जाय।

टैनी—पधारिये पधारिये, श्रीमती सौभाग्यवती, श्रीआर्य्य-महिलाजी, पधारिये, आपही का इन्तजार था।

घण्टाकरण—बहनो, क्षमा करना, मुझे जरा कपड़े पहनने मे देर होगई।

टैनी—हाँ, आपको तो कपड़े पहनने मे देर होनी ही चाहिये, क्योंकि रोजमर्रा के कपड़े उतार कर सभा के कपड़े पहनने थे न। (चौकी के पास जाकर) अच्छा, मेरा प्रस्ताव है कि आज की सभा नेत्री श्री आर्य महिला जी ही बनाई जाय।

आशा—मैं इसका अनुमोदन करती हूं।

विद्या—और मैं समर्थन करती हूँ।

(घण्टाकरण सभानेत्री की चौकी पर बैठता है
टैनी हार पहनाता है)

घण्टाकरण—माताओ, बहनो, बहुओ और बेटियो मैं काशी की एक राँड बेवा किस मुह से तुम्हे धन्यवाद दूँ जो तुमने आज इस वर्तमान समय मे, भारत की महिला सभा का मुझे सभापति बनाया है।

टैनी—(स्वगत) अरे सभापति या सभापत्नी ?

घण्टाकरण—अच्छा आज की सभा का मुख्य प्रस्ताव नारी जाति के प्रस्तावों की रक्षा करना है। आप सब को यह अच्छी तरह मालूम है कि अम्बरीष और मणिकान्त मे राज के लिये झगड़ा चल रहा है। जिसका फैसला प्रजा की राय पर निश्चत हुआ है। मुझे यह बताते हुए बड़ा खेद होता है कि इस राय लेने के काम में पुरुष जाति ने नारि जाति को सर्वथा अलग रक्खा है।

टैनी—शोक ! शोक !!

घण्टाकरण–इसी प्रस्ताव के अनुमोदन परपहला व्याख्यान आधी घड़ी तक (टनी की ओर इशारा करके) श्रीमती भारती बाई का होगा।

सब नारी–जुरूर, जुरूर।

टैनी–अरे मेरे दिमाग़ मे तो चर्खा घूम रहा था।

घण्टाकरण–[टनी से] पधारिये बाई जी।

टनी—माजियो, जीजियो मैं एक छोटीसी बालिका बोलना क्या जानूं ? परन्तु विषय ऐसा है कि बोलना पड़ता ही है। जब छाती फटरही हा, गला घुट रहा हो, प्राण खिंच रहे हो, सॉस बन्द हो रही हो, तो यह सम्भव है कि मुंह से 'आह' तक न निकले (करतलध्वनि) मैं पूछती हूॅ कि पुरुष शास्त्र के कौन से पन्ने पर यह लिखा हुआ है कि चूल्हे, चौके, चक्की, चर्खे को ठेकेदारिनी तो हम बनाई जांये, और हुकूमत की बात जब आये तो हमे भाग तक न दिया जाये। राज काज मे हम से राय तक न ली जाय। क्या हम सृष्टिपति की सृष्टि नहीं हैं ? क्या हम पुरुष जाति की अर्द्धाङ्गिनी नहीं हैं।

सब नारी–जुरूर हैं, जुरूर हैं।

टनी--हाँ- मैं क्या कर रही थी ? मैं कह रही थी कि हम माताओं का अधिकार-हमारे ही बच्चे-अपने पैरों से कुचलते हैं। हमारे ही हाथों की रोटियाँ खा खा कर बलवान् बनने वालेयह

मरदुये, हमे अवला कहकर हमारा मुंह वन्द करते हैं। कहदो इनसे, घतादो इन्हे, कि हम अब मर्द वनगी और तुम्हे औरत वनाकर घर मे रक्खेंगी। (घटाकरण घंटी वजाता है) जरा और कह लेने दीजिये। हाँ—मैं क्या कह रही थी ? मैं कह रही थी कि हम मर्द बनेंगी।

घण्टाकरण—आपका समय पूरा होगया।

टैनी—चौथयाई घड़ी और दे दीजिये। मैं चाहती हूं कि स्त्री से पुरुष बनने का श्रीगणेश आज ही हो और सभापत्नी जी से ही शुरू हो।

घण्टाकरण-बस सभापत्नी जी अब और बोलनेकी आज्ञा नहीं दूंगी।

टैनी—बस एक वात और कहनी है। मणिकान्त की माताजी ने नारी जाति की रक्षा के लिये ही—मणिकान्त को राज के लिए तजवीज किया है। हमारा धर्म है कि हम सब एक आवाज होकर रानी जी का साथ दें।

(सब स्त्रियाँ ताली पीटती हैं, टैनी वैठजाताहै)

घण्टाकरण—महिलामण्डल की महिलाओ, प्रस्ताव के समर्थन मे इसी जगह दो शब्द मुझे कहने हैं, नियम के अनुसार तो मुझे पीछे ही बोलना चाहिये, पर मै उन शब्दो को भूल न जाऊँ, इसीलिये वोलती हूं।

टैनी-बोलिये, बोलिये, सभापत्नी को तो सब समय-दूसरे को चुप करके-खुद बोल उठने का अधिकार है।

घण्टाकरण-मुझे यह कहना है कि श्रीमान् घण्टाकरण की स्त्री-लीलाबहन मुझ से कहती थी, कि अगर मणिकान्त राजा हुए तो वह नगर मे कन्याओ के लिये कन्यापाठशाला बनवायेंगे और विधवाओ के लिए विधवाश्रम खुलवायेंगे। वह दिन बड़ा पवित्र दिन होगा, जब नारियाँ दरबार की सदस्याँ होंगी, नारियाँ न्यायालय की गद्दियो पर बैठेगी, नारियाँ, नगर मे पहरा देंगी और नारियां सेना मे भरती होगी।

सरस्वती—(सुधा से) बहन, मै तो जाती हूँ।

सुधा—क्यो?

सरस्वती-मेरा बालक घर पर रो रहा होगा।

सुधा—जरा देर और ठहरो।

टैनी-सुनो सुनो।

घण्टाकरण—अब रहा यह बात कि राज के काज मे नारी जाति से जो राय नहीं ली जा रही है, इसके दोषी महाराज नाभाग हैं या नहीं?

टैनी—नहीं, वे नहीं हैं।

घण्टाकरण—हां वे नहीं हैं। नाभाग इसके दोषी नहीं हैं। दोषी है अम्बरीष, जो इस चतुराई से-मणिकान्त को नीचे ढकेल कर-खुद राजा बनना चाहता है।

टैनी—जुरूर जुरूर।

घण्टाकरण—इसीलिये यह महिला मण्डल [निश्चय करता है कि-अम्बरीष को राजा नहीं बनने दिया जायगा।

टैनी—बेशक, बेशक।

घण्टाकरण—नगर की समस्त नारियां-एक राय होकर-मणिकान्त को राजा बनायेंगी।

टैनी—हाँ, हाँ,

घण्टाकरण—स्वीकार है?

टैनी—हाँ, सर्व सम्मति से--

सब—स्वीकार है।

मनोरमा—नहीं, स्वीकार नहीं है, मैं इस प्रस्ताव का विरोध करती हूँ।

टैनी—बैठ जाओ, सभापति की आज्ञा बिना नहीं बोल सकती।

घण्टाकरण -और अब तो प्रस्ताव सर्व-सम्मति से स्वीकृत होगया; अब बोलने का अधिकार नहीं है।

लीला—(आकर) कैसे अधिकार नहीं है?

टैनी—अररर—

लीला—यह सभा नहीं है, एक कपट का नाटक है। ऐसे कपट नाटक को-कि जिसमें नारि जाति को छला जा रहा हो; यह लीला नहीं खिलने देगी (घण्टाकरण का कपड़ा खींचकर) डरो डरो, भगवान् से डरो, परमात्मा से डरो।

(घण्टाकरण कान हिलाता है, सब आश्चर्य में आजाते हैं)

—०—
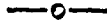
पांचवां सीन

स्थान—अम्बरीष का शयनागार

अम्बरीष—(आश्चर्य के साथ) क्या देखा ? अभी अभी मैंने स्वप्न मे क्या देखा ? मेरे प्रभु मुझ से यह कह रहे हैं कि—तुम राज लेलो; मेरी आज्ञा है कि-तुम राज लेलो । उन्होंने आज्ञा दी और मैंने उस आज्ञा के उत्तर में अपना सिर झुका दिया । बस, बस, इतने में आँख खुल गई-क्या मैं राज लेलूं ? मैं तो पिता के सामने, छोटे भाई के सामने, राज नहीं लेने की बात कह चुका हूँ । अब क्या करूँ ?—

इधर आत्मा से और संसार से यक जंग होती है ।
उधर मानूं न वह कहना-तो आज्ञा भंग होती है ॥

करूँगा, करूँगा, आत्मा और संसार का ध्यान छोड़ कर-अपने प्रभु ही की आज्ञा का पालन करूँगा । मैं जानता हूँ कि राज सुख की सामग्री नहीं; सुनहरी हथकड़ी है । मैं जानता हूँ कि राज अमृत का प्याला नहीं, एक सुन्दर घड़े में भरा हुआ हलाहल विष है । यही पद पाकर तो मनुष्य-तरह तरह के जुल्म

मक्कारियाँ, झगड़े और हत्यायें करता है। यही पद पाकर तो प्राणी-वासना का पिशाच, काम का कुत्ता, मूर्तिमान् अहङ्कार और जीते जी नारकी बन जाता है। पर-पर मेरे प्रभु कहते हैं कि-यही पद-मेरे पद के बाद-सृष्टि में सब से ऊँचा पद है। इस पद का गौरव, इस पद का मान, इस पद की मर्य्यादा और इस पद की शान रखने के लिये-तुझी को राजा बनना होगा। क्या प्रभु ने मुझे उस पद के योग्य इतना समझा है? उन्होंने समझा होगा, पर मैं तो अपने को किंचिन्मात्र भी नहीं समझता। जारहा हूं--किधर? जिधर कोई लिये जा रहा है। कर रहा हूं--क्या? वही जो अन्तःकरण में बैठकर कोई करा रहा है:--

जो मेरे प्रभु की इच्छा है, वही है प्रण वचन मेरा।
न तन मेरा, न धन मेरा, धरो मेरी; न धन मेरा।

गाना

भगवान्, मेरी नैया, उस पार लगा देना।
अब तक तो निभाया है, आगे भी निभा देना॥
दलबल के साथ माया, घेरे जो मुझे आकर।
तो देखते न रहना, झट आके बचा देना॥
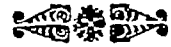
सम्भव है-झंझटों में, मैं तुमको भूल जाऊं।
पर नाथ, कहीं तुम भी मुझको न भुला देना !
तुम देव, मैं पुजारी, तुम इष्ट, मैं उपासक।
यह बात सच है, तो फिर सच करके दिखा देना॥
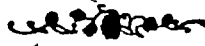
(अम्बरीष का जाना, भगवान् विष्णु का आना)

भगवान् विष्णु—भक्तराज, मै जानता हूँ कि, तुम निष्काम कर्म करने के अभिलाषा हो, मैं जानता हूं कि, तुम मेरे अनन्य भक्त हो जाने के कारण-राज से उपराम और विरागी हो। फिर भी मैंने स्वप्न में तुम्हें आज्ञा दी है कि, तुम राजा बनो। किसलिये ? इसलिये नहीं कि मैं तुम्हें माया में फँसाऊँ, बल्कि इसलिये कि तुम्हारे द्वारा-संसार को यह दिखाऊँ कि-माया में रहकर भी-जो मनुष्य माया से दूर रहता है, वही तो पूर्णभक्त और पूर्णज्ञानी कहलाता है। भक्ति और ज्ञान प्राप्त करके बनों को चले जाना-बहुत बड़ी बात नहीं है। बहुत बड़ी बात यही है कि, भक्ति और राजगद्दी दोनों किनारो के बीच मे, जीवन की धारा बहती रहे। मै तुम्हे ऐसा ही देखना चाहता हूं अम्बरीषः-

दिखादो विश्व को तुम-भक्त राजा कैसा होता है।
बतादो अपने शासन से कि शासन ऐसा होता है॥

❀ गाना ❀

नरों में श्रेष्ठ नृपाल कहाता।
न्यायी होना धर्म है उसका, वेद शास्त्र बतलाता।
न्यायी होकर भक्त भी हो तो, और भी वह बढ़ जाता।
नर मण्डल रक्षा को अपनी, नरपति उसे बनाता।
इसी लिए तो अंश वो मेरा, कहने में है आता।

(गाना)

स्थान—दरबार

(नाभाग, अम्बरीष, भूदेव शास्त्री, राजमन्त्री तथा प्रजा के अनेक प्रतिनिधि यथा स्थान बैठे हुए हैं। राज का प्रधान ताज एक रत्न-जटित थाल पर रक्खा हुआ है)

गायिकायें—

सजनी, पूजन को हो तयार, उगा है चांद पूर्णमासी का।
चढ़ाओ अर्घ्य, होउ बलिहार, उगा है चांद पूर्णमासी का॥
मेरा प्यारा चांद–मुझ बेचैन के है सामने।
रैन का पति–हँस के आया, रैन के है सामने॥
दूर इतना मुझसे है, और पास इतना मुझसे है।
छू नहीं सकता हूं मैं, पर नैन के है सामने॥
निरखता है सारा संसार, उगा है चांद पूर्णमासी का।

नाभाग—शास्त्री जी, मन्त्रीवर, और मेरी प्यारी प्रजा के प्रतिनिधिगण, आपको भली भांति विदित है कि, आज का यह दरबार एक बहुत बड़े महत्त्व का दरबार है। अभी थोड़ी देर पहले-अयोध्यावासियो ने अपनी जिम्मेवरी को खूब समझ बूझ कर-दो भाग्यों का फैसला कर दिया है। उसी फैसले के अनुसार-राज के काज से उपराम होने की इच्छा रखने वाला तुम्हारा यह बूढ़ा राजा-घोषणा करता है कि, आज से अयोध्या-वासी अम्बरीष की प्रजा हुये, अयोध्यावासियों का राजा अम्बरीष हुआ।

भूदेव—तथास्तु। शास्त्र भी यही कहता है:—

बहूनां सम्मतं ग्राह्यम्।

नाभाग—उठो अम्बरीष, अब इस बूढ़े पिता की आँखें-तुम्हारे ललाट पर राजतिलक देखना चाहती हैं। इस वृद्ध राजा के हाथ-तुम्हारे मस्तक को इस राजमुकुट से सुशोभित करना चाहते हैं।

सुकेशी—(आकर) ऐसा कभी नहीं होगा।

नाभाग—क्यों? क्यों नही होगा? सुकेशी, अब तुम इस शुभ कार्य मे विघ्न न डालो। प्रजा का बहुमत अम्बरीष के पक्ष में है।

सुकेशी—कैसी बहुमत ? कैसा पक्ष ? धोका है। चालबाजी है। विश्वासघात है, बेईमानी है। अम्बरीष के हिमायतियों ने यह-भोली प्रजा का बहुमत दौलत से खरीदा है। सच्चा बहुमत तो मेरे और मणिकान्त के साथ है। उसे देखना हो तो इस दरबार के बाहर देखो।

नाभाग—वह क्या ?

सुकेशी—

खड़ी बाहर है एक सेना हमारा साथ देने को।
मुकुट इस माथ पर पहुँचा तो अपना माथ देने को॥
खिचेंगे सिर से जब भाले, तो होगा भक्त का टीका।
तिलक रोली का पल-भर में, बनेगा रक्त का टीका॥

नाभाग—रानी ! रानी !!

सुकेशी—महाराज ! महाराज !! उधर देखिये, सिंहासन के पीछे देखिये।

नाभाग—क्या है ?

सुकेशी—लाल रंग का एक बादल।

नाभाग—और आगे ?

सुकेशी—धधकती हुई दो चितायें !

नाभाग—इसका ?

सुकेशी—इसका अर्थ यह कि मणिकान्त का गला काटकर और सुकेशी को फाँसी के तख्ते पर चढ़ाकर-आप अम्बरीष को राजा बनायेंगेः—

आज ही भाग्य सितारे के उदय का दिन है।
आज ही अपनी पराजय का, विजय का दिन है॥
आज बलिदान, पुनर्जन्म, मरण, जीवन है।
आज का दिन नहीं, उत्पत्ति प्रलय का दिन है॥

भूदेव—महारानी!

सुकेशी—चुप रहो, तुम्हें महाराज और महारानी के बीच में बोलने का कोई अधिकार नहीं।

अम्बरीष—हे भगवान! हे नारायण!!

नाभाग—सुकेशी, नहीं मानेगी?

सुकेशी—हाँ हाँ नहीं मानूंगा, नहीं मानूंगी।

नाभाग—तो इसी सिंहासन के पास, दो चिताओं के साथ साथ-एक तीसरी चिता जलेगी।

भूदेव—यह आप क्या कहने लगे महाराज!

नाभाग—ठीक कह रहा हूँ शास्त्री जी, मैंने बुढ़ापे में दूसरा विवाह किया है, इस पाप का प्रायश्चित, इस पाप का दण्ड, इस पाप का फल और इस पाप का भोग मुझे ही तो भोगना पड़ेगाः—

रचाई पुत्र के होते बुढ़ापे में नई शादी।
वही तो आज बरबादी का कारण बन गई शादी॥
मेरी दुर्गति, मेरी यह दुर्दशा रो रो के कहती है—
यही परिणाम है उनका, जो करते हैं कई शादी॥

भूदेव—सत्य है श्रीमहाराज, शास्त्र भी यही कहता है—

"बहूद्वाहो नाशकर."

मन्त्री—महाराज, मुहूर्त का समय निकला जा रहा है, आप ताज पहनाइये।

भूदेव—हां, शास्त्र भी यही कहता है—

"शुभस्य शीघ्रम"

(मन्त्री नाभाग राजा के आगे ताज बढ़ाता है)

सुकेशी—(कटार निकाल कर) ठहरजाओ, कैसा शास्त्र, कैसा मूहूर्त, जब तक सुकेशी का शरीर है, शरीर मे खून है, खून में उबाल है, उबाल में शक्ति है और उस शक्ति की जीती जागती मूर्त्ति-हाथ में यह कटार है, तब तक अम्बरीष को ताज नहीं पहनाया जायगा।

नाभाग—नहीं पहनाया जायगा?

सुकेशी—हाँ-हाँ-नहीं पहनाया जायगा। उसके पहले मैं समाप्त हूँगी, तुम समाप्त होगे, अम्बरीष, मणिकान्त, पद्मा, उमा यह दरबारी, यह प्रजावासी, सब समाप्त होंगे। आज पूर्णाहुति है आज पूर्ण संहार है—

आज अवध की शाम, सितारे नहीं देखने पायेगी।
आज अवध की रात्रि, जगत को कालरात्रि बन जायेगी॥
आज सूर्य से प्रथम, अस्त यह सूर्यवंश हो जायेगा।
महाप्रलय की महानिशा मे, भूमण्डल सा जायेगा॥

नाभाग—सुकेशी-सुकेशी-

सुकेशी-स्वामी-स्वामी-

नाभाग—यही हठ है ?

सुकेशी—हां-हां-यही हठ है।

नाभाग—यही-

सुकेशी—यही-यही-यही।

नाभाग—तो फेंक दो कटोर। अम्बरीष राजा नहीं बनाया जायेगा।

मणिकान्त—(आकर) नहीं, अम्बरीष ही राजा बनाया जायेगा।

सब दरबारी—कौन ?

भूदेव—मणिकान्त ?

नाभाग—सुकेशी का बेटा मणिकान्त ?

मणिकान्त—हां-हां, आपका बेटा मणिकान्त, बड़े भाई को राजा बनाने आया है।

सुकेशी—क्या कहा ? बड़े भाई को राजा बनाने आया है।

मणिकान्त—हाँ-हाँ, जिसे राजा बनना चाहिये, उसी को राजा बनाने आया हूं।

नाभाग—तू तो इस से पहले नास्तिक था ?

मणिकान्त—हाँ नास्तिक था, फिर आस्तिक हुआ, फिर मूर्ति-पूजक। पहले मैं उसे नहीं मानता था, मेरी बुद्धि, मेरी युक्ति और मेरी तर्कना उसे समझ ही नहीं सकी थी, पर–समझाया, किसने ? स्वयं उसी ने। कब ? कहाँ ? किस जगह ? उस दिन कोठार के भीतर नाज़ से भरी हुई बोरियों के वेश में। फिर फिर-उस पूजा मन्दिर की जगह पर, कालचक्र के समान घूमने वाले एक चक्र के रूप में। ओह ! कैसा सुन्दर वह रूप था, कितना दिव्य वह दर्शन था:—

पहले तो उसे राजा के कोठार में देखा।
फिर आँख की इस ज्योति के विस्तार में देखा॥
प्रत्यक्ष वही चक्र की फिर धार में देखा।
इनकार में देखा, कभी इक़रार में देखा॥
हर शब्द में, हर श्वास में, हर तार में देखा।

अम्बरीष—धन्य मेरे प्रभु, अयोध्या के राजा से बढ़कर–आपने मुझे यह राज दिया–जो तत्त्वों की पूजा के समर्थक को–अपना पुजारी बना लिया।

मणिकान्त—हां-हां, आज मै इस भरे दरबार के सामने कहूंगा, सारे संसार के सामने कहूंगा कि-तत्त्वों ही के मेल से यह प्रकृति का खिलौना नही बना है, इस खिलौने को किसी ने बनाया है-और बनाया है अपने ही खेलने के लिये। आह ! कैसा अच्छा वह खिलाड़ी है—

पृथ्वी में वही रहता है हमवार रूप से।
पानी में वही बह रहा, आधार रूप से॥
वह आग में व्यापक है जो संहार रूप से॥
यो वायु में बसता है निराकार रूप से।
'आकाश में भी है वही विस्तार रूप से॥

अम्बरीष—धन्य मणिकान्त, तुम तो मुझसे भी आगे बढ़ गये।

मणिकान्त—नहीं अम्बरीष, मैं तब भी छोटा था और अब भी छोटा हूं। पहले तुम मेरे बड़े भाई थे, फिर एक महा-पुरुष थे और अब गुरु हो। पहले मैं तुम्हारा छोटा भाई था, फिर एक शत्रु था और अब-शिष्य हूं।

नाभाग—मणिकान्त, मेरे दूसरे पुत्र मणिकान्त, तुम्हारा यह परिवर्त्तन देखकर, आज सारा संसार तुम्हें गोद में लेने के लिये तैयार है। आओ, आओ अभी थोड़ी देर पहले, सुकेशी की हठ पर मैं तुम्हे राजा बनाने के लिये तैयार

आ था, पर अब स्वयं, अपनी इच्छा से, तुम्हे राज देना चाहता हूँ।

मणिकान्त—राज और मुझे ? नहीं, यह राज तो भाई अम्बरीप का था और रहेगा। मेरा राज आज से सारा संसार है संसार भी नहीं, संसार से बहुत ऊंचे पर-एक अखण्ड अद्भुत, अलौकिक और अद्वितीय लोक है। जहाँ-राग नहीं है, द्वेष नहीं है, लोभ नहीं है, मोह नहीं है-एक महाशान्ति, एक अविनाशी आनन्द, एक मधुर मुरली की मीठी मीठी तान। यही मेरा राज है, उसी राज का मैं राजा हूँ—

मैं तोड़ चुका विश्व के धन धाम से नाता।
निष्काम का होता ही नहीं काम से नाता॥
रक्खा है अब न ऐश व आराम से नाता।
दौलत से न नाता है, न है दाम से नाता॥
नाता जो किसी से है वो हरिनाम से नाता।

सुकेशी—सचमुच यह पागल होगया है।

मणिकान्त—हां सचमुच मैं पागल होगया हूं, इस पागल की निगाह में, इधर, उधर तुम सबकी सूरतों के भीतर-उस झूला झूलने वाले चितचोर ही की तो मनोहर मूर्ति झूल रही है—

मैंने न कभी प्रेम से उसको था पुकारा।
उसने दया की दृष्टि से हर रोज निहारा॥

होकर कुपूत भी जो रहा बाप का प्यारा।
किस मुँह से सिर उठाये वो अहसान का मारा॥
हे नाथ, न फिर द्वैत की अज्ञान-निशा हो।
सागर की लहर अब नहीं सागर से जुदा हो॥

सुकेशी—अरे मूर्ख, अपनी इस माता की ओर देख!

मणिकान्त—हां देख रहा हूँ, माता की ओर देख रहा हूँ-

माता में भी वही है जो बेटे में छुपा है।
मैं तू का भेद फिर कहां जब पर्दा उठा है?

सुकेशी—तो क्या तू ताज नहीं पहनेगा?

मणिकान्त—ताज? ताज तो पहनूंगा।

सुकेशी—पहनेगा?

मणिकान्त—हाँ, हां, ताज पहनूंगा।

सुकेशी—किस तरह?

मणिकान्त-किस तरह? (अम्बरीष के सिर पर ताज रख कर) इस तरह।

सुकेशी—यह क्या?

मणिकान्त—यह मैंने ही तो ताज पहना है।

सुकेशी—होगया, सब-समाप्त होगया। मैंने यह समझ लिया कि मेरे पुत्र पैदा ही नहीं हुआ। मैं निपूती हूं। अब झगड़ा किसके लिये? अब यह जिन्दगी किसके लिये?

अम्बरीष राजा होगया, मणिकान्त सन्यासी होगया, तो मैं भी-मैं भी-जो पुत्र के लिये देवी से दानवी बनगई थी, मानवी से राक्षसी बनगई थी, अब इसी कटार द्वारा समाप्त होती हूँ।

नाभाग—हैं-हैं-सुकेशी!

सुकेशी—बस, बस, महाराज!

(कटार मार लेती है)

सब दरबारी—हैं! आत्मघात! महारानी का आत्मघात!!

अम्बरीष—वज्रपात! वज्रपात!!

मणिकान्त—होने दो, यह भी मेरे प्यारे की एक प्यारी झांकी है।

अम्बरीष—यह कैसा राजतिलक का मुहूर्त हुआ? ताज पहनते ही इतना बड़ा अमंगल? हास्य मे करुणा? शृङ्गार मे वीभत्स? मुझे तो ऐसे राज्य से घृणा होती है।

भूदेव—यह अमङ्गल, यह अशकुन, महर्षि दुर्वासा की उग्र तपस्या का फल है, अभी उन तपस्वीराज का क्रोध शान्त ही कहां हुआ है!

अम्बरीष-हे नाथ, हे दीनबन्धो, हे अशरण-शरण, हे प्रणत-पाल, हे अन्तर्य्यामी, तुम कहां हो? मुझे इस गहरे गड्ढे में ढकेल कर अलग खड़े खड़े क्या सोच रहे हो? या तो भक्त की बाँह पकड़ कर उबार लो, नहीं तो तुम भी-इसी में-धड़ाम से कूद

तीसरा अङ्क

पहला सीन

स्थान—घण्टाकरण का मकान

लीला—(प्रवेश करके) भगवान् जाने-मेरे पति को क्या हो गया है। मैं उन्हे सीधी राह पर लाना चाहती हूँ, पर वे उल्टी राह पर ही बहकते जाते हैं। उस दिन महिला सभा मे, जो मैंने उनकी पोल खोली, उसे उन्होने अपना अपमान समझा और उसी दिन से मुझ से बोलना छोड़ दिया, मेरे हाथ का भोजन करना छोड़ दिया और तो और, बच्चा पैदा हुये, आज एक महीना होगया पर न अभी उसकी छठी कराई, न दष्टौन कराया। भारत के महापुरुषो, क्या यही तुम्हारा समाज है ? क्या यही तुम्हारे समाज का न्याय है ?

नारी ता नर को समझे नारायण घटघटवासी।
नर समझे, नारी को अपनी मोल खरीदी दासी ?

टैनी—(आकर) मीन, मेष, मकर, कुम्भ—

लीला—अरे ओ मकर कुम्भ, यह क्या बक रहा है ? मैंने तो तुझे ज्योतिषी को बुलाने भेजा था।

टैनी—वृश्चिक, तुला, मिथुन, कर्क।

लीला—अरे ओ मिथुन, कर्क, फिर वही फिक फिक! ज्योतिषी को नहीं लाया ?

टैनी—ज्योतिषी आकर क्या करता, मैं खुद ही सारी ज्योतिष सीख आया, वृष, धन, कन्या, सिंह—

लीला—अरे ठहर तो सही-कन्या, सिंह।

टैनी—देखो, तुम मुझे रोकोगी तो मैं राशियाँ भूल जाऊंगा जरा इन राशियों को मुंह पै बैठ नो जाने दो, फिर भैया की जन्मपत्रिका मैं ही बना दूंगा।

लीला—ले, तूने बनाई जन्मपत्रिका। पनिहारा अगर राशियों के नाम याद करके जन्मपत्रिका बना डालेगा तो घर के पाधा पुरोहितों को कौन पूछेगा ?

टैनी—अजी तो यह घर के पाधा पुरोहित-राशियों के नाम के सिवाय और जानते ही क्या हैं ?

लीला—अच्छा यह बातें छोड़कर मतलब पर आजा। किसी से कुण्डली बनवाई है ?

टैनी—बनवाई है माताजी, बनवाई है। राज के सब से बड़े ज्योतिषी-भूदेव शास्त्री से बनवाई है।

लीला—तो उन्हें अपने साथ यहाँ लेकर आता। कुण्डली का फल भी सुना जाते और बच्चे का नाम भी रख जाते।

टैनी—अजी बात तो यह है कि-यह पण्डित, शास्त्री और ज्योतिषी बड़े मिज़ाजी होते हैं।

लीला—तो तूने मुहर उनकी भेंट नहीं की? मैंने तो इसी लिये तुझे एक मुहर दे दी थी।

टैनी—(सिर खुजाकर) वह मुहर? वह मुहर? (स्वगत) उस मुहर पर तो टैनी की जेब की मुहर लग गई।

लीला—अच्छा जा, यह दो मुहरे और लेजा (मुहरें देती है) अब शास्त्री को अपने साथ ही लाना। यह शास्त्री और ज्योतिषी लोग बिना बुलाये नहीं आते हैं। समझा?

टैनी—समझा? मुहरों का मुंह देखेंगे, तो शास्त्री और ज्योतिषी क्या शास्त्री और ज्योतिषियों के बाबा दादा तक स्वर्ग से उतर आयेंगे।

(जाना)

लीला—वे अगर बच्चे की जन्मपत्रिका नहीं बनायेंगे तो सही मै तो बनवाऊंगी। (बच्चे की रोने की आवाज़ आना) अरी दुलारी, ओ दुलारी।

दुलारी—(नेपथ्य से) आई शेठानी जी (आकर) क्या है?

लीला—देख, लल्ला रो रहा है। उसे घुट्टी नही पिलाई?
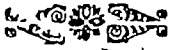
दुलारी—अजी वह तो गोदी से गिर गया है, पालने पर रहता ही नहीं।

लीला—अच्छा उसे यहाँ लेआ (दुलारी का जाना) बच्चे को मां ही पाल सकती है, धाय नहीं। (दुलारी गोद में बच्चे को लाती है) अब कैसा चुप है ? तू उसे गोदी ही मे रक्खा कर। (बच्चे को प्यार करके) मेरे लाला, मेरे मुन्ने, तू अपने पिता की तरह ईश्वर-विरोधी न बनना। तेरी माँ तुझसे इतना ही चाहती है।

टैनी—(आकर) लीजिये, ज्योतिषी जी, जन्मपत्रिका जी के साथ आगये।

(भूदेव का आना)

लीला—पधारिये महाराज, प्रणाम करती हूँ। दुलारी, एक पीढ़ा तो ले आ।

भूदेव—नहीं, उसकी आवश्यकता नहीं है, मुझे ज्यादा नहीं ठहरना है।

लीला—पत्री तो आपने तैयार कर ही ली होगी ?

भूदेव—हाँ तैयार है।

ईश्वर-भक्ति

नक़ल जन्म-पत्री
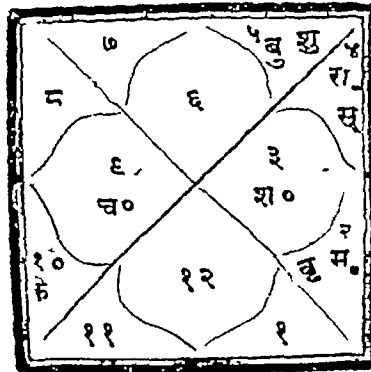
मूल का तीसरा चरण

लीला—जरा बताइये तो सही, ग्रह कैसे है ?

भूदेव—अच्छे है, ग्यारहवें राहु और सूर्य हैं। इसका फल यह है कि लड़का बड़ा व्यौपारी होगा।

टैनी—तब तो टैनी की भी मौज रहेगी।

भूदेव—बारहवे घर में बुध और शुक्र का होना बताता है कि खर्चीला भी खूब होगा।

टैनी—क्यों न होगा। हर एक कंजूस बाप का बेटा खरचीला ही हुआ करता है।

भूदेव—हाँ-दसवें घर मे शनिश्चर महाराज बैठे हैं, जो पिता को बुरे हैं।

टैनी—क्या डर है, बच्चे ही तो अपने बापो का क्रिया कर्म्म करते आये हैं।

लीला—भगवान् की भक्ति का भी कोई योग है?

भूदेव—हाँ-है। नवे घर के वृहस्पति और मङ्गल भक्त बनाते हैं। हाथ की रेखायें ज़रा और देखलूं।

(पैर देखना)

टैनी—यह आप हाथ की रेखायें देखते हैं या पैर की?

भूदेव—ज्योतिषियो को दोनों देखनी पड़ती हैं।

टैनी—हां भाई, ज्योतिषी तो दोनो लोक के राजा हैं।

भूदेव—मांजी; इसकी आयुरेखा तो गाई फाड़ कर निकल गई है-मेरी राय मे तो यह बहुत बड़ी उम्र पायेगा।

टैनी—हां-सब को मार कर मरेगा।

भूदेव—(दासी से) जाओ, इसकी आँख में नींद है, सुलादो।

(दासी का ले जाना)

लीला—और कोई दोष तो नहीं है ?

भूदेव—दोष इतना है कि:—

टैनी—कन्या लग्न में जन्मा है।

भूदेव—मूलों में हुआ है।

लीला—फिर ?

भूदेव—मूलशान्ति करानी पड़ेगी।

लीला—क्या खर्च होगा ?

टैनी—यही हज़ार, दो हज़ार।

भूदेव—सेठजी ख़र्च करेंगे ?

टैनी—सेठजी नहीं करेंगे, तो सेठानीजी तो करगी। कृपण सेठों के घरों की सेठानियां-ऐसी बातो मे बड़ी उदार हुआ करती हैं। इन देवियों ही के कारण तो ज्योतिषी और स्याने जिन्दा हैं, यह न होतीं, तो इन आकाशी-दूतों की अर्थियाँ कब की उठ गई होतीं।

लीला—अच्छा नाम तो बताइये, क्या बनता है ?

भूदेव—'भा' अक्षर पर नाम आता है।

टैनी—तो भागमल रखिये।

भूदेव—नहीं, भगवान् रखता हूँ।

लीला—भगवान् ? ठीक है।

टैनी—भगवान् ?

लीला--हाँ-हां भगवान्।

घण्टाकरण—(आकर) हूंहूंहूंहूं। यह क्या गड़बड़ घोटाला है ? घण्टाकरण के घर मे यह बण्टाढार क्यो आया है ?

टैनी—भागो, भागो, शास्त्रीजी, नहीं तो अभी सब राहु, केतु और शनिश्चर तुम्हारे ही सर पर होंगे।

लीला—मैंने ज्योतिषी जी को बुलाया है, तुम बच्चे की कुण्डली नहीं बनवाते, तो क्या मैं भी नहीं बनवाऊँ ?

घण्टाकरण—अरी, तो क्या मैं मर थोड़े ही गया हूं, जा तू बच्चे के बाप का काम भी खुद ही कर रही है। जा, जा, तू तो उसे दूध पिला।

लीला--तो महीने भर से तुम थे कहाँ ?

घण्टाकरण--तुझे क्या मालूम कि इस महीने मुझ पर क्या गुजरी है। वह पगला मणिकान्त, आखिर तक पगला ही निकला। मेरी सारी मेहनत को मलियामेट करके उसने अम्बरीष ही को राजा बना दिया।

भूदेव--तो क्या हुआ, तुमने तो इस बीच मे दस पाँच लाख कमा ही लिये।

घण्टाकरण--महाराज, तो उन्हीं दश पाँच लाख को उड़ाने के लिये तुमने मेरे घर में यह ज्योतिष की सुरङ्ग लगाई होगी ? क्या बताऊँ ? इन औरतो के मारे हम मर्द लोग

दबे रहते हैं, नहीं तो कब का तुम्हे और तुम्हारे इस ज्योतिष शास्त्र को मङ्गल के लोक को पहुँचा दिया होता।

भूदेव—सेठ जी, इन देवियों ही के कारण धर्म जिन्दा है।

घण्टाकरण—धर्म तो जिन्दा है या नहीं, पर तुम लोगों की थोदें ज़ुरूर जिन्दा हैं।

भूदेव—लाला जी, जब भगवान् ने बच्चा दिया है—

घण्टाकरण—हूं हूं हूं हूं।

भूदेव—तो उसका संस्कार कराना ही पड़ेगा।

घण्टाकरण—वह संस्कार वंस्कार मैं खुद ही कर लूँगा, उसके लिये तुम जैसे दल्लालों की ज़ुरूरत नहीं है।

लीला—हां संस्कार कराने में ख़र्च जो करना पड़ेगा? इसी लिए तो महीने भर से मुंह छुपाये हुए थे!

घण्टाकरण—अच्छा तो ऐसे ही सही, तुझे क्या मालूम कि मैंने कैसे कैसे ईमानदारी के रोजगार करके यह दौलत जोड़ी है।

लीला—सब मालूम है, क़र्ज़दारों को दो दो हज़ार देकर बीस बीस हज़ार बही पर चढ़वाये हैं। क्यों टैनी?

टैनी—टैनी तो इस वक्त चन्द्रमा और राहु के बीच मे आगया है।

घण्टाकरण—इस फिजूल खर्ची का भी कुछ ठिकाना है? इतनी बड़ी जन्मपत्री? अयोध्या से काशी तक की पक्की सड़क? क्या छोटे कागज़ पर यह नही बन सकती थी?

भूदेव—मुझे तो आज्ञा दीजिये, भगवान् की माता।

घण्टाकरण—ऊँहूंहूंहूं, यह क्या बक रहा है?

टैनी—शेठ जी, भैया की धनराशि है, ज्योतिषी जी ने उसका नाम भगवान् रक्खा है।

घण्टाकरण—ऊँहूंहूंहूं। एक डण्डा तो ले आ, अभी इन ज्योतिषी की धनराशि निकालता हूँ।

भूदेव—मैं तो खुद ही जारहा हूँ, भगवान् तुझे समझे।

घण्टा०—ऊँहूंहूंहूं।

भूदेव—भगवान् तुझे सीधा राह पर लाये।

घण्टाकरण—ऊँहूंहूंहूं।

भूदेव—भगवान् तेरा भला करे।

घण्टाकरण—ऊँहूंहूंहूं।

भूदेव—भगवान् तेरा उद्धार करे।

(जाना)

घण्टाकरण—ऊँहूंहूंहूं (घूमजाता है) क्या भाग गया मान मेष?

टैनी—हां भाग गया, वृष, मिथुन, कर्क।

घण्टाकरण—भाग न जाता, तो यह सिंह उसे कन्या न बना देता। अच्छा तू इधर आ।

टनी-क्या है ? मुझ पर भी क्या साढ़ सातीं आई ?

घण्टाकरण—अपना बोरिया बंधना उठा, और अभी यहां से नौ दो ग्यारह हो जा।

लीला—इस बेचारे की क्या खता है ?

घण्टाकरण—चुप रहो जी, मेरी राय है कि घरों में नौकर रखने ही नहीं चाहियें। यही नौकर तो घरों में सुरंग लगाने वालों के हाथ के फावड़े हैं।

लीला—हर एक घर में छोटे छोटे बच्चे, नौकर रहते हैं।

घण्टाकरण—वे ही बच्चे किसी दिन घर वालों के बाप बनते हैं। (टैनी से) सुनता है बे ? निकल यहां से।

टैनी—अच्छा तो हिसाब कर दीजिये। तनख्वाह में जो धेली पावली निकलती हो दे दीजिये।

घण्टाकरण-हां ले धेली पावली (चपत मारता है)। और लेगा धेली पावली ?

टैनी—नहीं, अब कुछ नहीं चाहिये। हाय री आर्यजाति, यह है तेरे समाज मे नौकरो की हालतः—

हम आदमी नहीं हैं, भाजी का हैं मसाला।
जब चाहा पीस डाला, जब चाहा भून डाला॥

(गया)

लीला—अब घर का काम धन्धा कौन करेगा ?

घण्टाकरण—तुम। अब से तुम्हे ही अपने हाथ से घर का सब कामधन्धा करना पड़ेगा। जिस घर में नौकर काम धन्धा करते है, वहा औरतों की तन्दुरुस्ती खराब रहती है।

लीला—मुझसे तो पानी नहीं भरा जायगा, बर्तन नहीं मजेंगे।

घण्टाकरण—तो, तुम भी इस घर को खाली कर दो। अपने मायके चली जाओ।

लीला—क्यो? क्या मेरा यह घर नहीं है?

घण्टाकरण—क़ानून कहता है कि रोटी कपड़े के सिवाय, और इस घर में तुम्हारा कोई अधिकार नहीं है।

लीला—कैसा क़ानून! मै घर की मालिकनी हूँ। तुम मेरे पति हो और यह मेरा बच्चा है।

घण्टाकरण—तो उस दिन महिला सभा मे, जो मेरा अपमान किया था उसकी क्षमा मांगो।

लीला—क्षमा, पचास दफा क्षमा मॉग लूंगी। मैं तो इन चरणो की दासी हूं। दासी को तो इन चरणो ही की सेवा में रहना चाहिये।

घण्टाकरण—लीला!

लीला—स्वामी।

घण्टाकरण—मै हार गया।

लीला—नही मैं हार गई।

गाना

लीला—प्राणों के प्यारे मैं जाउं तो पै वारी ।

घण्टा०-प्यारे की प्यारी तू देवी मैं पुजारी ॥

लीला—ऐसा नहीं है ।

घण्टा०-तो कैसा है ?

लीला—तुम चन्दा मैं चांदनी, तुम सूरज मैं धूप ।

घण्टा०-मैं लोभी, कलदार सा प्यारा तेरा रूप ॥

लीला—सारस की सी जोड़ी है यह—

घण्टा०—..............बलिहारम् जी बलिहारम्

भजकलदारम् भजकलदारम् भजकलदारम् दिलदारम्,
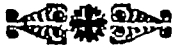
स्थान—उमा का शयनागार ।

(उमा सो रही है । एक खिड़की खुली हुई है, जिसमें जेठ बदी दशमी का चन्द्रमा दिखाई दे रहा है । मणिकान्त आता है)

मणिकान्त—नश्वर संसार को त्यागना ही होगा । इस मायाजाल से छुटकारा पाने के लिये सन्यास लेना ही होगा । संसार को त्याग कर, सन्यास को लेकर, हिमालय की तलहटी में, किसी निर्जन स्थान में भगवती भागीरथी की कलकल करती हुई धारा के किनारे-इस पञ्चभूत के शरीर का स्वामी, जब अखण्ड समाधि में लीन होगा और उस समय-उस आनन्द अवस्था के समय-इसकी पीठ से, बनो के बूढ़े बूढ़े मृग-अपने सींगो की खुजली मिटाते होंगे, तभी-तभी तो-निर्वाण पद प्राप्त होगा । वह दिन कब होगा आत्मदेव ?

गगन से भूमि तक, जिस रोज ध्वनि छायेगी सोहं की ।
लहर गङ्गा की भी जब रागिनी गायेगी सोहं की ॥

स्रुति जब शून्य में आवाज पहुंचायेगी सोहं की।
सुरति मे जिस समय मस्ती समा जायेगी सोहं की॥
तभी अनहद के तारो से सदा आयेगी सोहं की।

(उमा को देखकर) पर-पर मणिकान्त, यह भी तो सोहं का एक मूर्ति है। इस प्रेममयी को, लाजमयी को, ज्ञानमयी को त्यागमयी को त्याग कर तू सन्यास लेगा ? नही, नहीं—

है मिथ्या, पर अलहदा ब्रह्म से माया न होती है।
जुदा सूरज से, सूरज की कभी छाया न होती है॥

(उमा के पास बैठकर) मेरा सन्यास आश्रम यह मूर्ति है, समाधिस्थान इस मूर्ति का शान्त हृदयहै, अमर पद इस हृदय का प्रेम है और सोहं नाद इस हृदय की मीठी मीठी आवाज है-

इन्हीं केशो के उपवन मे, बटोही वन के विचरूंगा।
इन्हीं होठो की वाणी को लहर गंगा की समझूंगा॥

(उठकर) नही, नहीं, कभी नहीं। कदापि नहीं। एक हड्डी, माँस मज्जा, और रक्त की कोठरी को सन्यास–आश्रम कह रहा है–मूर्ख ? एक जीवन और मरण की डोर पर नाचने वाली अज्ञान पुतली को-सोहं की मूर्ति बता रहा है-पागल ? चल, इसे यहीं छोड़दे–और अपने निश्चित स्थान की तरफ पाँव बढ़ा—

गरल का सुधा से मिलता है नाता।
अमावस को सूरजकी आभा बताता॥

कहाँ मृत्यु यह और कहाँवह अमरपद।
उठा-कर तू पत्थर को पारस गंवाता ।।

(उमा करवट बदलती है)

ठीक हुआ, ठीक हुआ। तूने भी मेरी ओर से करवटबदली और मैंने भी तेरी ओर से आँख मूंद ली (चांद को देखकर) हैं! तू क्यो हंस रहा है तू क्यों आँखें गड़ा गड़ा कर मेरी तरफ देख रहा है ? छुपजा, खिसकजा मेरे सन्यास धारण करने के समय—जेठ बदी दसमी के चाँद, तू अस्त होजा। जिस तरह आज तू दस कलाओं से क्षीण हो रहा है उसी तरह मै भी—कुमार अवस्था में आजाने के बाद अपने दस वर्ष ख्वाब में बरबाद कर चुका हूं।

[उमा उठकर बैठ जाती है]

आह ! दूसरा चाँद भी उदय होगया। यह पूर्णमासी का चाँद है। प्यार से ज्यादा पूजा की चीज है।

उमा-[मणिकान्त के समीप आकर] प्राणनाथ !

मणिकान्त—माता !

उमा—है ! माता ?

मणिकान्त—हाँ-माता । अयोध्या के दूसरे राजकुमार की पत्नी उमा, तुम्हारा प्राणनाथ मरगया और मरकर उसने एक सन्यासी के रूप मे जन्म भी लेलिया।
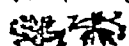
उमा-तो पिताजी, उमा भी मर गई। उसकी आत्मा उसके मृतक शरीर से निकल कर, एक सन्यासी की आत्मा में लय होगई।

मणिकान्त—यह तुमने क्या कहा ?

उमा—आपने भी क्या कहा ?

मणिकान्त-मैंने कहा कि मैं अब सन्यासी हूँ।

उमा—मैंने कहा कि मै उसी सन्यासी के सन्यास रूपी दीपक की पतंगी हूँ।

मणिकान्त—समझ गया, तुम सन्यास-आश्रम मे भी मुझे नहीं छोड़ना चाहती।

उमा-हाँ, मैं सन्यास आश्रम मे भी अपने देवता को नहीं छोड़ूंगी। साथ ही रहूँगी। पत्नी की तरह नहीं, तो पुत्री की तरह रहूँगी। पुत्री की तरह नहीं तो शिष्य की तरह रहूँगी।

मणिकान्त-सन्यासी किसी को साथ नहीं रख सकता।

उमा-यह ऐसा ही सन्यास होगा, एक नया सन्यास होगा, एक निराला सन्यास होगा।

मणिकान्त-तो उसे सन्यास मत कहो।

उमा—मत कहो। वाणप्रस्थ, सन्यास आदि नामो और आश्रमो और बन्धनो से भी आगे बढ़ चलो मेरे देवता! मै और आप दोनो इस संसार से बहुत दूर बैठकर तप करेंगे। अखण्ड तप करेंगे, घोर तप करेंगे। तप करते ही करते अपने स्वरूप में लीन हो जायेंगे।

मणिकान्त—तो चलो, अभी चलो, अब सवेरा होने में देर नहीं है-इसी ब्राह्ममुहूर्त्त से चलो ।

उमा—अच्छी बात है । मैं भगवा कपड़े लाती हूँ ।

मणिकान्त—तुम ?

उमा-हाँ-मैं । मै कई दिन से समझ रही थी । कि यह दिन आने वाला है । इसीलिये मैंने भगवा कपड़े तैयार कर लिये थे ।

मणिकान्त- अच्छा तो ले आओ वह भँगवा कपड़े तुम मुझे पहनाओ, मैं तुम्हे पहनाऊंगा

(सुकेशी का भगवा कपड़े लिये हुए आना)

सुकेशी-नहीं मैं तुम दोनो को पहनाऊंगी । (मणिकान्त को देकर) लो, यह तुम्हारे लिये । (उमा को देकर) और यह तुम्हारे लिये ।

मणिकान्त-माता !

सुकेशी-बेटा ! बोलना नहीं । इस माता का एक रूप कटार के साथ उस भरे दरवार ने देखा था और आज बेटे और बेटी को भगवा कपड़े देने का दूसरा रूप किसी को नहीं दिखाना है । जाओ उधर जाकर इन्हे पहनलो । सवेरा भी होगया ।

[उमा और मणिकान्त का जाना]

पद्मा-[आकर] यह क्या माता ?

सुकेशी —तू कहाँ से आई है ?

पद्मा-मैंने अभी अभी एक स्वप्न देखा, चौंकी और इधर चली आई इधर आकर उस स्वप्न को जागृति मे देखा ।

सुकेशी-मैं अपनी जो मूर्त्ति किसी को नहीं दिखाना चाहती थी-वह तूने देख ली । बुरा हुआ ।

पद्मा-माता !

सुकेशी-बेटी !

पद्मा-तुम ऐसा क्यों कर रही हो ?

सुकेशी-यह मत पूछ ।

पद्मा-क्यो ? क्या मै गैर हूं ?

सुकेशी नहीं, तू मेरी दूसरी उमा है । और आज से तो उमा से भी ज्यादा प्यारी है । सुन, मैंने अपनी जिन्दगी मे कोई पुण्य का काम नहीं किया । आज इतना करती हूं कि अपने बेटे और बहू को तपस्वी और तपस्विनी बना कर बनो को भेजती हूं । बस, इस पजलती हुई आत्मा पर, इतना ही जल छिड़कना था ।

पद्मा-तो, यह तो मेरे और मेरे स्वामा के लिये एक महादुःख की बात है ।

सुकेशी-क्यो ?

पद्मा—हमने राज लिया, इसी कारण तो आप ऐसा कर रही हैं ? हमने अपने को संसार की तरफ़ ढकेल दिया, इसी लिये तो देवर जी संसार को त्याग रहे हैं ?
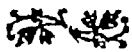
अपना, पराया जिससे हो, लानत है ऐसे राज पर ।
जो दूसरों का बोझ हो, धिक्कार ऐसे ताज पर ॥

सुकेशी—नहीं बेटी, यह बात नहीं है ।

पद्मा—यह बात नहीं है, तो क्या बात है ? सुनो माता, सूर्य, चन्द्र को साक्षी करके कहती हूं-गंगा यमुना की 'शपथ खाके कहती हूं, मै और मेरे स्वामी खुशी से इसके लिये तैयार हैं कि देवर जी राज लें, देवर जी राजा बन जायें—

हमारा राज माता, हरि का मन्दिर है, हरि की पूजा है ।
प्रजा सेवा से बढ़कर, हमको ठाकुरजी की सेवा है ॥

सुकेशी—तो उस दिन तूने अपने पति को प्रतिज्ञा करने से क्यों रोका था-जिस दिन मणिकान्त उससे राज की भीख माँगने गया था ?

पद्मा—उस दिन मैंने अपना धर्म वही समझा था ।

सुकेशी—और आज ।

पद्मा—आज यही समझती हूं-जो कह रही हूं । माताजी, मैं तो उस दिन की बात को भी पाप नहीं समझती हूं, आप अगर उसे पाप समझती हैं-तो आपके सामने उस पाप का प्रायश्चित करने को तैयार हूं । (ताली का गुच्छा फेंककर)—

लो यह राज कोष की ताली, अपना ताला देदो ।
उनके बदले, हम दोनो को 'देश-निकाला' देदो ॥

मा, आज्ञापालन में हम भी, नहीं-कर्मी कम दोनों।
आप कहें तो मरजाने तक को तैयार हम दोनों ॥

(पैरों पर गिर पड़ती है)

सुकेशी-उठो बेटी, तुम निर्दोष हो।

पद्मा-हैं !

सुकेशी-तुम्हारा पति निर्दोष है।

पद्मा-हैं।

सुकेशी-हाँ-अम्बरीष तो किसी समय भी राज नहीं चाहता था। यह तो मणिकान्त ही ने उसे राजा बनाया है। अम्बरीष अगर भक्ति मे लीन है, तो मणिकान्त ने आजसे तपस्या की तरफ़ मन लगाया है। दोनो ही मेरे बेटे हैं, दोनों ही बेटो की मैं माँ हूं। और अम्बरीष की तो किस मुंह से बड़ाई करूं-

किया विषपान जिसने, उसको अमृत फल खिला डाला।
मै ऐसे पुत्र पै वारी, मरी मां को जिला डाला ॥

अम्बरीष—(आकर) कहां है ? कहाँ है ? मेरा भाई मणिकान्त कहाँ है ? मेरी दूसरी भुजा मणिकान्त कहाँ है ? दासों द्वारा यह ख़बर फैल गई है कि वह सन्यासी हो रहा है।

मणिकान्त-[आकर] यह है। यह है। गुरुदेव, आपका शिष्य यह है। पिता जी, आपका पुत्र यह है।

पद्मा—[अम्बरीष से] स्वामी।

अम्बरीप—पद्मे !

पद्मा—यह दृश्य देखकर मेरी आखें निकली जा रहीहैं। इस करुणा के सागर की उछलती हुई लहरें मेरी सारी देह को डुबा रही है। मुझे पकड़ लो, मेरे हृदय को किसी तरह शान्त कर दो।

अम्बरीष—प्रिया, इस हृदय की शान्ति का एक ही उपाय है।

पद्मा-वह क्या ?

अम्बरीप—इस राज और राज-सम्पत्ति को मै आजसे ठाकुर जी के नाम अर्पण करता हूं। अब से यह राज, न अम्बरीष का है-न मणिकान्त का-भगवान् का है-

उन्ही की मूर्त्ति के सिक्के, चलेंगे राज मे अब से।
लगेगी छाप उनके नाम की, सब काज मे अब से॥
समझकर दास खुद को, कोष की रक्षा करेंगे हम।
ज़रूरत ही के लायक़, खर्च को उसमे से लेंगे हम॥

पद्मा-बस इतना ही ?

अम्बरीष—नही-और भी, अब तक हरि-पूजन और हरि कथा-श्रवण मे जितना समय देते रहे हैं, अब उस से और ज्यादा दिया करेंगे।

पद्मा—और ?

अम्बरीष—और-एक नहीं, अनेक अश्वमेध यज्ञो द्वारा सरस्वती नदी पर अपने भगवान् की विराट् आराधना करेंगे।

पद्मा—पर देवर जी के सन्यास की यादगार क्या चीज़ होगी ?

अम्बरीष—आज क्या तिथि है ?

पद्मा—जेठ वदी एकादशी।

अम्बरीष—तो बस, प्रतिज्ञा करो कि अब से हर एक एकादशी को उपवास हुआ करेगा।

पद्मा—एकादशी व्रत तो अब भी हम किया करते हैं।

अम्बरी—पपरअब से वह व्रत निर्जल किया करेंगे। आठ प्रहर तक उपवास करके, द्वादशी के दिन, जब ब्राह्मणों और तपस्वियो को भोजन करा दिया करेंगे, तब हम और तुम भोजन किया करेंगे।

(उमा भगवा वस्त्र पहन कर आती है)

उमा-(मणिकान्त से) पिताजी, चलने में अब क्या देरहै?

नाभाग—(आकर) ओह! यह कैसा करुणा भरा दृश्य है। हे हरि! हे भगवन्!

(गिरना चाहते है, भूदेव आकर पकड़ेता है)

भूदेव-शान्त, शान्त राजन्!

—*—

स्थान—जङ्गल ।

(दुर्वासा का रुद्रदत्त सहित प्रवेश)

दुर्वासा—सत, रज, तम, तीनों के ऊपर तपस्वीका स्थान है। सुन रहा है रुद्रदत्त ? मैं आज तपस्वियों में तपस्वीराज हूं ।

रुद्रदत्त—हाँ, गुरु महाराज ।

दुर्वासा—मैं आज मुनियों में मुकुटमणि हूं ।

रुद्रदत्त—जी, गुरु महाराज ।

दुर्वासा—हिमालय की चोटी पर तपस्या करके सारे संसार के ऋषियों का सम्राट हो गया हूँ ।

रुद्रदत्त—हाँ, गुरु महाराज ।

दुर्वासा—मेरे एक एक रुँये में अब एक एक सृष्टि उत्पन्न करने और संहार करने का बल आगया है ।

रुद्रदत्त—जी, गुरु महाराज ।

दुर्वासा—मेरे तपश्या काल मे इतना अन्धेर ? एक छाप तिलक और कण्ठी माला वाला राजा बन गया ? देख लूंगा, सब देखलूंगा।

रुद्रदत्त—हाँ गुरु महाराज, आपके तो एक शाप से सब समाप्त होजायगा।

दुर्वासा—अरे मेरे पेट में इस अम्बरीष के बाप तक का इतिहास है नभग का बेटा वह नाभाग जब गुरुकुल मे पढ़ता था तो उस समय सारा राजपाट उसके भाइयों ने लेलिया था। तब-तब-द्वादशाह नाम का यज्ञ करने वाले आङ्गिरस ऋषि ने अपने सत्र का धन देकर नाभाग को धनी बनाया था। वह धन रुद्र का भाग था। रुद्र ने विरोध किया था और नभग ने मान लिया था। नभग के इसी न्याय पर प्रसन्न होकर रुद्र ने वह धन नाभाग पर ही छोड़ दिया था।

रुद्रदत्त—इसका अर्थ क्या हुआ गुरुजी ?

दुर्वासा—इसका अर्थ यह है कि यह सारी विभूति, यह सारी सम्पत्ति, तपस्वियों ही की है, इस ठाकुर के बेटे की नहीं।

रुद्रदत्त--तो इस सारी विभूति और सम्पत्ति का मुझे राजा बना दीजिये गुरुजी, मैंने आपकी बड़ी सेवा की है।

दुर्वासा—तू अभी तक मूर्ख राज है।

रुद्रदत्त—मै अगर मूर्ख राज हूं तो आप तपस्वी राज हैं ?

चाँद, सितारे सब नीचे उतर आये। हिमालय और विन्ध्याचल धुआँधार होकर ऊपर को उड़ने लगे! यह क्या है? धुआँ! काल काला धुआँ (दो यमदूतों का दोनों ओर से घण्टाकरण के समीप आना) अरेरेरे! इधर उधर दोनों ओर काला काला धुआँ। (शैय्या पर गिरपड़ता है)

एक यमदूत—उठ, उठ, सूद दर सूद की मार से अन—गिनता गरीबों को मार डालने वाले चाण्डाल! तेरा खाता पूरा होगया।

दूसरा यमदूत—हाँ, अनाथों और विधवाओं की धरोहरें हड़प हड़प कर धनवान् बनने वाले राक्षस तेरा अन्तकाल आ पहुंचा।

घण्टाकरण—(उठकर) कौन? कौन? तुम दोनो कौनहो

एक यमदूत—तेरे पाप।

दूसरा यमदूत-तेरे बुरे कर्म (दोनों घण्टा करण को पकड़लेतेहैं)

घण्टाकरण-अरे मुझे क्यो पकड़ा है?

एक यमदूत—लेजाने के लिये।

घण्टाकरण—कहाँ।

दूसरा यमदूत—यमराज के दरबार मे।

घण्टाकरण—अरे मैंने अपने बच्चे का अभी कुछ भी सुख नहीं देखा है। मैंने अपनी करोड़ों की सम्पदा का अभी

कोई भी इन्तजाम नहीं किया है । मुझे छोड़ दो, मैं अपने घर ही रहूँगा ।

एक यमदूत—कैसा घर ।

दूसरा यमदूत—यह बड़े घर का परवाना है ।

घण्टाकरण—छोड़ो, छोड़ो मैं वहाँ नही जाऊंगा ।

एक यमदूत—जाना ही पड़ेगा ।

दूसरा यमदूत-यह वज्र से भी कठोर हाथ हैं, इनसे तू नहीं छूट सकता ।

घण्टाकरण-हाय ! अब क्या करूं ।

एक यमदूत-वक्त होगया । ले चलो ।

दूसरा यमदूत-घसीट कर ले चलो ।

घण्टाकरण-भगवान् मुझे बचा ।

(विमान सहित दो विष्णु के पार्षद प्रगट हो जाते हैं
यमदूत उन्हें देखते ही भाग जाते हैं)

एक पार्षद-चलिये भक्तवर-

दूसरा पार्षद—विमान पर बैठकर वैकुण्ठ चलिये ।

घण्टाकरण - तुम कौन हो ? वे दोनो काले काले रूप कहाँ गये ?

एक पार्षद-हम भगवान् के पार्षद हैं । वे दोनों काले काले जम दूत थे, जो हमारे आते ही भाग गये ।

दूसरा पार्षद-तुमने अन्त समय मे भगवान के नाम का उच्चारण किया है, इसीलिये हम तुम्हे वैकुण्ठलोक से लेने आये है।
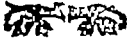
घण्टाकरण—ओह! मैंने तो भगवान् के नाम से अपने बेटे को पुकारा था, पर उन दीनदयालू ने अपने नाम की महिमा रखने को मेरे लिये विमान भेज दिया। मैं कौन हूं? उनके नाम का एक विरोधी। जब मुझ जैसा नाम विरोधी-किसी भाव से भी सही-एक बार उनका नाम लेकर मरते समय तर सकता है, तो जो लोग रात दिन सच्चे प्रेम से उनका नाम लेते है, वे तो जीते जी तरे हुए हैं। प्रभु महाप्रभु यह न समझना कि मैं अब आपका नाम लेने लगूंगा। नहीं-नाम तो आपका अब भी नहीं लूंगा। दुनियां से जिस नाम का लेना मैंने छोड़ा है, वैकुण्ठ मे भी वह नाम नहीं लूगा। यहां नफ़रत की वजह से नाम नहीं लेता था और वहाँ अदब की वजह से नाम नहीं लूंगा-

अशिष्टाचार मुंह को खायगा, सम्मान के मुंह पर।
पिता का नाम कैसे आयगा, सन्तान के मुंह पर॥

(विमान पर बैठता है, लीला और भगवान् आते हैं)

लीला-स्वामी!

भगवान्-पिताजी!

घण्टाकरण-

तुम रहो जग मे अभी कर्त्तव्य पालन के लिये।
प्रेम का लेकर सुमरनी, नाम सुमरन के लिये॥

(विमान पर चला जाता है)

—❀❀—

स्थान—नदी का किनारा

(भगवान् विष्णु का, सुदर्शन सहित प्रवेश)

सुदर्शन—एक, दो, तीन, चार, जब तक चार बातों का उत्तर नहीं लेऊँगा आगे नहीं बढ़ने दूगा।

विष्णु—वह चार बातें क्या हैं सुदर्शन ?

सुदर्शन—मैं एक एक कहता जाऊँ और आप उत्तर देते जायें।

विष्णु—अच्छा कह चलो।

सुदर्शन—पहली बात यह है कि-घण्टाकरण ने तो अपने पुत्र को पुकारा था, आपको नहीं, फिर आपने उसे वैकुण्ठधाम क्यों दिया ?

विष्णु—इसका उत्तर यह है कि-मैंने उसे वैकुण्ठधाम नहीं दिया, मेरे नाम ने उसे वैकुण्ठधाम दिया। मेरे नाम का और वह भी मरते समय पुकारे जाने वाले मेरे नाम का-यही प्रताप है कि-मेरे पार्षद स्वयं आजाते हैं और उस नाम के पुकारने

वाले को वैकुण्ठधाम पहुंचाते है। क्या तुम अजामिल की बात को भूल गये ? वह तो इससे भी ज्यादा पापी था, परन्तु अन्त मे-इसी तरह पुत्र के धोखे मे-नारायण नाम का उच्चारण कर-वह भी वैकुण्ठ गया था। मैं समझता हूँ कि मेरे नाम पर संसारी लोगो का नाम रखने की प्रथा जिन ज्योतिषियो ने डाली है, वे इस नाम-माहात्म्य को खूब जानते है।

सुदर्शन—अच्छा अब दूसरी बात का उत्तर दीजिये-भगवान् नाम वास्तव मे एक आदर-सूचक नाम है, जिसका अर्थ होता है-ऐश्वर्यवान्। यह नाम ब्रह्मा के नाम के पहले भी लिया जाता है और शंकर के नाम के पहले भी, जैसे-भगवान् ब्रह्मा, भगवान् शङ्कर फिर क्या कारण है कि भगवान् नाम का उच्चारण सुनकर उन दोनो के दूत और गण तो घण्टाकरण के पास नही पहुंचे, आपके पार्षद पहुंच गये ?

विष्णु—मेरे पार्षद उसके पास इसलिये पहुंच गये कि वास्तव मे भगवान् नाम मेरा ही है। यदि भगवान् नाम के साथ साथ ब्रह्मा या रुद्र पुकारा जायगा तो उनका उससे सम्बन्ध होगा। नहीं तो, केवल भगवान् कहने से मेरे ही पार्षद पहुँचेंगे। फिर घण्टाकरण ने तो यह कहा था कि-"भगवान् मुझे बचा"। तो बचाने-अर्थात् पालन करने-का काम तो मेरा ही है। ब्रह्मा और शङ्कर का काम तो उत्पन्न और संहार करने का है। इस दृष्टि से भी मेरे ही पार्षदों को पहुँचना चाहिये था।

सुदर्शन—अच्छा, अब तीसरी बात पर आता हूँ। घण्टा-करण की स्त्री-लीला-पतिव्रता होने पर भी विधवा क्यों हुई।

विष्णु—इसीलिये कि वह उस उत्तमश्रेणी की पतिव्रताओं में नहीं है, जो मेरे या मेरी प्रकृति के क्रम को बदल डालती हैं। वह एक अच्छे विचार की आर्यनारी है। अच्छे विचार की नारी विधवा होकर भी समाज को लाभ पहुचाया करती है, अपने उपदेशों से अपनी दूसरी बहनों को पवित्र मार्ग दिखलाया करती है। इसलिये उसका अभी और थोड़े दिन संसार में रहना बुरा नहीं है।

सुदर्शन—अब चौथी बात और रहगई।

विष्णु—वह भी पूछ लो।

सुदर्शन—आपने जो अम्बरीष की सेवा में मुझे नियुक्त किया है सो यह नियुक्ति कब तक रहेगी?

विष्णु—तबतक, जबतक कि दुर्वासाजी का क्रोध शान्त नहीं हो जायगा। सुनो और ध्यान से सुनो-यहीं इस नाटक का अन्तिम दृश्य है-अम्बरीष यमुना के किनारे मधोबन में, कार्तिक सुदी एकादशी के व्रत का पारण करने वाला है। दुर्वासाजी अपनी तपस्या की आग से उसे भस्म करने की चेष्टा करेंगे। उस समय तुम दुर्वासाजी पर आक्रमण करना। वह जहाँ भी जायें

उन्हे न छोड़ना, उनके पीछे ही रहना। पर ध्यान रहे-यह आक्रमण उन्हे डराने ही के लिये हो, कोई और हानि पहुंचाने के लिये न हो।

सुदर्शन—फिर क्या होगा ?

विष्णु—यह समय पर मालूम होगा। जाओ, अब तुम उसी स्थान पर पहुंच जाओ जहाँ नियुक्त हो, मुझे कुछ समय के लिये वैकुण्ठ जाना है।

सुदर्शन—जो आज्ञा।

(जाना)

विष्णु—(स्वगत) एक, दो, तीन-नही, चार व्यक्तियों को विशेष प्रकार से लाभ पहुँचाकर अब यह खेल समाप्त हो जायगा। तपस्वीवर दुर्वासा इस बात का अनुभव करने लगेंगे कि तपस्वी को क्रोध नही करना चाहिये। अम्बरीष की उच्च-कोटि के भक्तो मे गणना होजयगी गरुड़ तप के साथ साथ भक्ति के महत्त्व को समझ जायगा और सुदर्शन यह समझ जायगा कि विवाद अच्छा नही होता, उसने जो गरुड़ के साथ विवाद किया उसके कारण उसके प्रभु को इतना बड़ा खेल खेलना पड़ा। चलो-जो होरहा है अच्छा है, मेरे लिये तो सभी अच्छा है—

कही बाँधा तपस्वी ने कही पर भक्त घेरे है।
मै उसका हूं किसी भी मार्ग से, जो पास मेरे है॥

गाना

भक्तों के हृदय की मैं झनकार हो रहा हूं
वह मेरे—और मैं उनका आधार होरहा हूं ॥
दो बूंद आँसुओं में, दो प्रेम के बोलों में।
मैं एक से दो होकर संसार होरहा हूं ॥
मैं सृष्टि, मैं ही सृष्टा, मैं तृप्ति, मैं ही तृप्ता।
मैं रुद्र बनके जगमें संहार हो रहा हूं ॥
बेकार चल पड़े हैं निर्गुण सगुण के झगड़े।
जब विश्व की वीणा का, मैं तार होरहाहूं ॥

—o—

छठा सीन
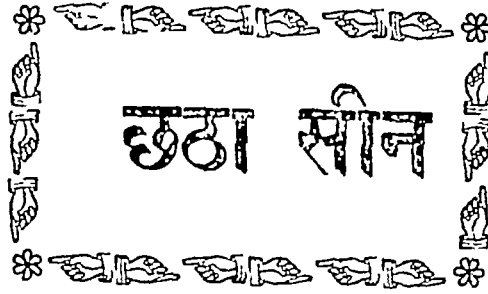
स्थान—मधुवन

भगवान् की मूर्ति के सामने पद्मा समेत अम्बरीष पूजा सेवा में निमग्न है, दो सेवक तथा भूदेवशास्त्री उपस्थितहैं

गाना

—❀—

जय जय श्रीपति, जय लक्ष्मीपति, जय कमलाधीश
हरि जय कमलाधीश
जगदाधार जगद्धर(२)जगपति जगदीश,
ॐ नमो नारायणाय
अमर अनादि अनन्त अगोचर, अखिल भुवन भर्ता
प्रभु अखिल भुवन भर्त्ता
तुमही विधि, हरि, हर हो (२) कर्त्ता, धर्त्ता संहर्त्ता,
ॐ नमोनारायणाय

(दुर्वासा का आना)

दुर्वासा—अम्बरीष ।

अम्बरीष—अहाहाहा पधारिए तपस्वोराज ! मैं बड़ भागी हूँ-जो इस मधुबन मे द्वादशी के दिन, मेरे व्रत के पारण पर आपने दर्शन दिए ।

दुर्वासा—व्रत का पारण तो तपस्या ही का एक अङ्ग है, इसीलिए तेरे निमन्त्रण पर मैं यहां आगया हूं । भोजनो मे अभी कितनी देर है ?

अम्बरीष—तैयार ही है । अब अधिक देर नहीं है ।

दुर्वासा—अच्छा तो मै तब तक यमुना स्नान कर आऊँ ।

अम्बरीष—जैसी इच्छा ।

दुर्वासा—मेरे साथ मेरे एक हजार शिष्य भी भोजन करेंगे, सुना ?

अम्बरीष—जैसी आज्ञा ।

दुर्वासा—तेरे भण्डार मे भोजन की कमी तो नहीं है ।

अम्बरीष—मुनिराज, मेरा क्या, भण्डार तो भगवान् का है । भगवान् के भण्डार मे किस वस्तु की कमी ?

जो जग को पालता है, अपना भी पालन वो कर देगा ।
भरा कोठार है जिसने वहा भण्डार भर देगा ॥

दुर्वासा—ओ हो ! अभी तक वही बेसुरा राग ! अभी तक वही बेरुखा अलाप ! मैंने समझ लिया कि तेरा अन्ध विश्वास अभी तक उसी रूप मे है ।

अम्बरीष—मुनिराज,

रूप और नाम से आगे नही बढ़ना है मुझे।
रूप को पूजना है-नाम सुमरना है मुझे ॥
मेरे भगवान् रहे, मैं रहूं, संसार रहे ।
मोक्ष यह ही है मेरी, इसमे ही रहना है मुझे ॥

दुर्वासा—पर-भक्ति के अन्धे, यह याद रख, रूप और नाम जहाँ तक है, वहाँ तक माया है। सत्य इससे परे है—

वह कहीं शंख बजाता है उसे मिलता है।
अपना आपा जो मिटाता है उसे मिलता है ॥

अम्बरीष—महामुने,

अपना आपा जो मिटा डाला तो आनन्द कहाँ।
अपना अस्तित्व गँवा डाला तो आनन्द कहाँ ॥
हम रहे. वे रहे यह सुख के उदय का दिन है।
वे अकेले हुए जिस दिन, वो प्रलय का दिन है ॥

दुर्वासा—हूँ, समझा, भोजन के साथ साथ तेरे इस अज्ञान को भी आज मिटाना है—

निशा का नाश हो सकता नहीं, दीपक के बाले से।
अँधेरा विश्व का जाता है सूरज के उजाले से ॥

(दुर्वासा का जाना)

पद्मा—प्राणेश !

अम्बरीष—प्रिये !

पद्मा—मुझे तो इस शुभ कार्य मे कुछ विघ्न पड़ता हुआ दिखाई देता है।

अम्बरीष—विघ्न ! विघ्न कैसा ?

पद्मा—ऐसा कि यह मुनि महाराज एक तो महा क्रोधी और फिर हमारी भक्ति के विरोधी है। हमने जो इस अवसर पर इन्हे निमन्त्रण किया है यह उचित नहीं किया।

अम्बरीष—ऐसी बात ध्यान मे भी न आने दो प्रिये ! शुभ कार्य्य मे विघ्न पड ही नहीं सकता, और यदि पडा भी तो उसे नष्ट करनेवाला उस सिहासन पर बैठा हुआ है—

हमे चिन्ता नहीं अपनी, उसे चिन्ता हमारा है।
हमारी नाव का रक्षक, सुदर्शन चक्रधारा है॥

भूदेव—राजेन्द्र !

अम्बरीष—कहिए शास्त्री जी ?

भूदेव—पचाङ्ग मे द्वादशी तो दो ही घडी और है। ऋषि राज दुर्वासा कब आयेगे और कब पारण होगा ?

अम्बरीष—सेवक !

सेवक—महाराज !

अम्बरीष—जाओ और मेरी ओर से, मुनिराज से यह निवेदन कर आओ कि—द्वादशी दो ही घड़ी और रहगई है। वे शीघ्र पधारने की कृपा करे।

सेवक—जो आज्ञा। (जाना)

पद्मा—शास्त्री जी,

भूदेव—महारानी,

पद्मा—यदि द्वादशी रहते रहते मुनिराज महाराज नहीं आये तो क्या होगा? त्रयोदशी में तो पारण हो नहीं सकता।

भूदेव—हां, एकादशी के व्रत का पारण तो द्वादशी ही में होता है। शास्त्र कहता है—'द्वादश्यां पारणं चरेत्"

सेवक—(आकर) महाराज, मुनिराज ने तो यमुना-स्नान करके समाधि लगाली है। उनके शिष्यों का कहना है कि-अब तो वे समाधि से जब उठेंगे तभी आसकेंगे।

पद्मा—देखिए आई न वही बात-जो मुझे पहले दिखाई देती थी।

भूदेव—ब्राह्मण-भोजन का सङ्कल्प कर देना बड़ी बात नहीं है, बड़ी बात यह है कि-समय पर ब्राह्मण आजाय और जीम-जाय।

अम्बरीष—(सिंहासन की ओर देखकर) मेरे प्रभु! यह क्या होरहा है।

पद्मा—अब तो एक ही घड़ी द्वादशी रहगई होगी शास्त्री जी?

भूदेव—(पंचाङ्ग देखकर) एक घड़ी से भी कम। यदि इसके भीतर ही पारण न हुआ तो व्रत-भङ्ग दोष होजायगा।

अम्बरीष—(सिंहासन की ओर देखकर) नाथ, यह क्या लीला है ? आप वहाँ बैठे बैठे यह क्या खेल खेल रहे हैं ?

पद्मा—तो अब क्या होगा शास्त्रीजी ?

भूदेव—मेरे विचार से तो यह होना चाहिए—

अम्बरीष—क्या ?

भूदेव—एक तुलसी-पत्र मुख मे रखकर और भगवान् का चरणामृत लेकर पारण की पूर्ति कर डालिए।

पद्मा—इस में कुछ दोष तो नहीं है ?

भूदेव—नहीं, तुलसी पत्र और चरणामृत ग्रहण करने में कभी कुछ दोष नही।

अम्बरीष—अच्छा तो यही करता हूं।

(भूदेव शास्त्री, अम्बरीष और पद्मा को तुलसी पत्र तथा भगवान् का चरणामृत देते हैं)

भूदेव—अकालमृत्यु हरणं सर्व व्याधि विनाशनम्।
विष्णुपादोदकं पीत्वा, पुनर्जन्म न विद्यते ॥

(दुर्वासा का आना)

दुर्वासा—हैं ! यह क्या होरहा है !

अम्बरीष—मुनिराज ! मुनिराज !

दुर्वासा—बस बस, यह मुनिराज मुनिराज वाली होठों का मिठास बन्द कर। हृदय का हलाहल इस मिठास से नहीं छुप सकता। तू महाधूर्त्त है, मैंने तेरी धूर्त्तता समझ ली है।

ब्राह्मण भोजन के बहाने, जान बूझ कर तूने आज मेरा अपमान किया है—

तुझे देना पड़ेगा धृष्ट धृष्टाचार का बदला।
मै दुर्वासा नहीं, जो लूं न दुर्व्यवहार का बदला॥

अम्बरीष—प्रभो, प्रभो द्वादशी जारही थी, इस कारण मैंने यह तुलसीपत्र—

दुर्वासा—अरे कैसी द्वादशी? किसको द्वादशी? द्वादशी द्वादशी!

द्वादशी तेरस का सब झगड़ा अभी मिटने को है।
आगई है अब अमावस्या ग्रहण पड़ने को है॥

अम्बरीष—कृपानाथ, निरपराधी पर आप कुपित होरहे हैं,

दुर्वासा—निरपराधी, और तू? कभी नहीं, कदापि नहीं। तू एक अतिथि का, आमन्त्रित का, ब्राह्मण का, तपस्वी का बहुत बड़ा अपराधी है। तेरे अपराध पर स्वर्ग मृत्यु और पाताल कोई पर्दा नहीं डाल सकता। तुझे इस अपराध का दण्ड दिया जायगा। मैं महा तपस्वी दुर्वासा हूँ, मेरे क्रोध को तू नहीं, जानता?—

धरा धँस जायगी पाताल मे पाताल फूटेगा।
गगन का सूर्य्य, क्षण भर मे अभी पृथ्वी पै टूटेगा॥
प्रलय का रूप कर दूंगा प्रकट इस माथ से अपने।
लरड़ दूंगा मै दोनों लोक, दोनों हाथ से अपने॥

अम्बरीष—क्षमा, क्षमा कर दीजिए मुनिराज ! यदि आपके विचार से मैं अपराधी भी हूँ तो मेरे अपराध को क्षमा कर दीजिए ! मैं तो आपका दास हूं ।

(दण्डवत करना चाहता है)

दुर्वासा—(हाथ से धक्का देकर) चल हट । यह दुर्वासा क्षमा पढ़ा ी नहीं है—

खौल उट्ठा है रुधिर इस ब्राह्मण सन्तान का ।
नष्ट कर देगा घरौंदा यह तेरे अभिमान का ॥

पद्मा—मुनिमहाराज, मुनिमहाराज, सच तो यह है कि इस बहाने आपका वह कोप फूट रहा है जो हमारी भक्ति का विरोध है, और जिसकी भीषण अग्नि अभी तक आप के हृदय के अग्निकुण्ड में धधक रही है ।

दुर्वासा—अच्छा यही सही, आज उसी अग्निकुण्ड में तेरे पति की आहुति होगी ।

पद्मा—तो यह सती भी मौन नहीं रहेगी ।

अम्बरीष—शान्त-शान्त-पद्मे, आज व्रत के पारण का दिन है, क्रोध न आने पाये, नहीं तो व्रत और पारण सब नष्ट हो जायगा । तुम तो उस सिंहासन वाले में ही ध्यान लगाओ ।

दुर्वासा—अरे कैसा सिंहासन और कैसा सिंहासनवाला ! तेरे साथ उसे भी देख लेता हूं—

महा यज्ञ के अन्त का बलि-प्रदान है आज ।
उग्र तपस्या का मेरी अनुष्ठान है आज ॥

हटा चटा की जटों को, फूटो तप-रवि ज्वाल।
यह कृत्यानल करेगी, भस्म तुझे तत्काल॥

(पृथ्वी पर जटा मारते हैं, कृत्यानल उत्पन्न होती है)

अम्बरीष—हे दीनबन्धो ! हे दीनानाथ !

(सुदर्शन चक्र प्रकट होकर कृत्यानल को नष्ट करता है)

दुर्वासा—अरेरेरे, यह क्या !

(सुदर्शन दुर्वासा पर झपटता है)

अम्बरीष—रक्षा ! रक्षा !!

दुर्वासा—अरे मेरे तपोबल को क्या होगया ?

(आकाश को उड़ना, सुदर्शन का पीछे पीछे जाना)

अम्बरीष—सुदर्शनदेव-रक्षा ।

भूदेव—यह दृश्य नहीं है, मेरी शङ्का का समाधान है।

अम्बरीष—प्रिये !

पद्मा—स्वामी !

अम्बरीष—चलो उधर चलो, श्रीयमुनाजी की ओर चलो। एक बार फिर स्नान करके, वहीं जङ्गल के किनारे खड़े होकर, तपस्वीराज की रक्षा के लिए अपने भगवान् से प्रार्थना करेंगे। भोजन तो अब उसी समय होगा, जब तपस्वीराज को जिमा देंगे।

(पद्मा और अम्बरीष का प्रस्थान)

भूदेव—धन्य आर्य्यदेव। धन्य आर्य्यदेवी।

(जाना)

विशेष दृश्य

ब्रह्मलोक

ब्रह्मा के सामने, आगे आगे दुर्वासा पीछे पीछे चक्र का प्रवेश

— ✿ —

दुर्वासा—रक्षा रक्षा, ब्रह्मदेव, रक्षा। इस चक्र से मेरी रक्षा कीजिए। मैं, इन्द्र चन्द्र आदि अनेक लोकों में फिर आया, कहीं भी मेरी रक्षा नहीं हुई।

ब्रह्मा—ऋषिराज इस चक्र से आपकी रक्षा करना मेरी शक्ति के बाहर है।

× × ×

दुर्वासा—कारण ?

ब्रह्मा—कारण यह कि मैं तो केवल सृष्टिकर्त्ता हूं। मृत्यु के देवता शङ्कर हैं, आप उनके पास जाइए।

(ब्रह्मा जी अन्तर्ध्यान होते हैं, दुर्वासा चक्र सहित जाते हैं)

शिवलोक

दुर्वासा—(चक्र सहित आकर) हे कैलशपते, हे शूलपाणे, आप कहाँ हैं ? मुझे उबारिए।

शिव—(प्रकट होकर) तपस्वीवर, क्या है ?

दुर्वासा--बचाइए, बचाइये, मृत्युंजय, मुझ इस मृत्यु के मुख से बचाइए, इस चक्र के घात से बचाइए। ब्रह्मदेव तक के पास मैं हो आया, उन तक ने मेरी रक्षा नहीं की।

शिव--दुर्वासा जी, ब्रह्मदेव की तरह, मैं भी आपको इस चक्र से नहीं बचा सकता।

दुर्वासा--क्यों ?

शिव--क्यों कि मैं तो संहार के कार्य्य का स्वामी हूं। रक्षा का कार्य भगवान् विष्णु का है। आप उन्हीं की शरण में जाइए।

(अन्तर्ध्यान होना)

दुर्वासा--हाय, आज कोई भी सुनने वाला नहीं ! चल विष्णु-भक्त का अपमान करनेवाले तपस्वी, विष्णु-लोक ही में चल।

(चक्र सहित जाना)

विष्णु-लोक

दुर्वासा—भगवान्! भगवान् !! पाहिमाम् ! त्राहिमाम!

(गिर पड़ना)

विष्णु—(चक्र को रुकने का संकेत करके) उठिए तपस्विवर्य।

दुर्वासा—उठूं ? कैसे उठूं ? उठने की अब सामर्थ्य ही नहीं है। आप उठायेंगे तभी उठ सकूंगा। आग बुझ गई। नशा उतर गया। अब धन नहीं है तपस्या का अभिमान नहीं है।

है-केवल-पश्चात्ताप। और इस हृदय मे-इस आंख में-इस शरीर की रग रग में-नस नस आपका, आपकी भक्ति का और आपके भक्त का असीम-आदर—

बहुत अभिमान की निद्रा मे अपनी आन को देखा।
खुली जब आँख तो-भगवान् ही भगवान को देखा॥

विष्णु—अच्छा अब उठिए, निर्भय हूजिए।

दुर्वासा—(उठकर) निर्भय तो तब होऊँ जब यह चक्र हट जाय।

विष्णु—चक्र भी हट जायेगा-परन्तु—

दुर्वासा--हाँ-हाँ—

विष्णु—उसी जगह यह हटेगा—जहाँ से आपके पीछे पड़ा है। जिस भक्त को आपने भस्म कर देना चाहा था, वही इसे हटा सकता है। मुझे इसके हटाने का अधिकार नहीं है।

दुर्वासा--क्यों-आप तो त्रिलोकीनाथ भगवान् हैं?

विष्णु--ब्रह्मर्षे, भक्त भगवान से भी बड़ा है अब भी इस समय भी, उसकी भक्ति आपकी रक्षा कर रही है। आपको नहीं मालूम है, भक्तराज अम्बरीष अभी तक यमुना के किनारे खड़ा खड़ा-आपकी रक्षा के लिए प्रार्थना कर रहा है। आज एक वर्ष होने आया, उसने भोजन नहीं किया है

दुर्वासा--अच्छा तो मैं उसी की शरण मे जाऊँगा कैसा भी सही, हूँ तो मैं एक तपस्वी, आपको भी मेरी एक प्रार्थना सुननी ही पड़ेगी।

विष्णु--कहिए।

दुर्वासा--आप भी वहां चलें।

विष्णु--ठीक है आप चलिए, मै भी आता हूँ।

(अन्तर्ध्यान होना)

दुर्वासा-- (स्वगत) हायरे अभिमान! हायरे क्रोध! तूने मुझे कहीं का न रक्खा।--

अहङ्कारी तपस्वीगण-विकलता देखलें मेरा।
जगत के जितने क्रोधी हैं—अवस्था देखलें मेरी॥

(जाना)

नदी—तट

(अम्बरीष पद्मा सहित खड़ा हुआ है, भूदेव भी हैं, दुर्वासा चक्र--सहित आते हैं)

दुर्वासा--क्षमा, क्षमा, राजर्षे, क्षमा। भक्तराज, क्षमा।

अम्बरीष--हैं, है, मुनिराज (चक्रको रुकने का संकेत करके) क्षमा के तो हम अधिकारी हैं।

(चरणों में गिरना)

विष्णु- (आकर अम्बरीप से) उठो, भक्तराज। (दुर्वासा से) ऋषिराज, आप भी अब पूर्ण निर्भय हूजिए (चक्र से) चक्र, तुम अब देवरूप मे आजाओ। (सुदर्शन का चक्र रूप छोडकर देवरूप में आजाना) तपस्वीवर और भक्तराज, वास्तव मे इस लीला के भीतर-यह निर्णय करना था कि-भक्त और तपस्वो दोनों ही बड़े है, क्रोध बुरी चीज है। मुझे अपने प्यारे गरुड़ को यही दिखाना था।

सुदर्शन-नाथ, गरुड़ है कहां ?

विष्णु-अबतक मेरी लीला के पर्दे में छुपा था। यही भूदेवशास्त्री-गरुड़ है।

(भूदेव का गरुड बनना)

अम्बरीष-प्रभो, इसी रूप मे मेरे माता पिता को भी दर्शन दे। वे दोनो इधर ही आरहे है।

(नाभाग और सुकेशी का आना)

नाभाग—सोऽहम्।

सुकेशी-तत्वमसि।

विष्णु—अहा ! संसार देखले-(नाभाग और सुकेशी की ओर सकेत करके)यह ज्ञान की मूर्तियां हैं।(अम्बरीष और पद्माकी ओर

संकेत करके) यह उपासना की मूर्तियाँ हैं। और जिनमें क्रोध नहीं है, अहंकार नहीं है-ऐसी कर्म की मूर्तियां-उत्तर तपोभूमि में है।

(मन्दिरप्रान्त गया उमा नष्ट करते दिखाई देते हैं)

अम्बरीष आदि---जय, जय, त्रिलोकीनाथ भगवान् की जय!।

—०—

॥ इति ॥